अध्याय- २

पत्र-साहित्य की पृष्ठभूमि तथा हिन्दी में उसका विकास

अध्याय:२

पत्र-साहित्य की पृष्ठभूमि और हिन्दी में उसका विकास

(अ) पत्र-साहित्य की पृष्ठभूमि

पत्र-लेखन की प्राचीनता :

हिन्दी में विभिन्न क्षेत्रों के प्रसिद्ध व्यक्तियों के पत्रों को संगृहीत कर प्रकाशित करने की प्रवृत्ति का शुभारम्भ आधुनिक युग में ही हुआ है, परन्तु प्रियजन के पास पत्र लिखकर सन्देश भेजने की परम्परा अति प्राचीनकाल से चली आ रही है । कहा जाता है कि मनुष्य ने जबसे लिपि-ज्ञान प्राप्त किया, अभिव्यक्ति हेतु उसने पत्रों को सर्वथा उपयुक्त ठहराया । कागज़ का आविष्कार तो बहुत बाद में हुआ ।[१] पहले लोग शिलातल, भोजपत्र, ताल-पत्र आदि पर सन्देश-समाचार लिखकर भेजते थे । श्री यज्ञदत्त शर्मा ने "मिट्टी के फलक" को पत्र-लेखन का प्राचीनतम आधार-फलक मानते हुए लिखा है :-

"संसार के विभिन्न भागों में, लिपियों के आविष्कार के बाद, पत्रों का आदान-प्रदान आरम्भ हो गया था । लेखन-सामग्री तथा संचार-साधनों की सुविधा आज की तुलना में शतांश भी न थी, किन्तु पत्र-प्रेमी मानवों को कोई भी बाधा दमित न कर पाती थी ; ताड़-पत्र, और रेशमी कपड़े तो बहुत बाद में आये, विवेकशील और आविष्कार-कुशल मानवों ने गीली मिट्टी के फलकों पर ही अक्षर खोदकर पत्र लिखे थे, फलकों को पकाया था और यथास्थान भेजा था । ये विलक्षण पत्र संसार के अनेक पुरावशेष-स्थलों में पुराविदों की सतर्क और कौशलपूर्ण खुदाइयों के फलस्वरूप अब पृथ्वी के गर्भ से निकलकर प्रकाश में आये हैं ।[२]

१" सचित्र विश्वकोश", खण्ड-६ (१९६७), राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, पृ० १८ ।

"कागज़ सर्वप्रथम आज से १८०० वर्ष पहले चीन में तैयार हुआ था ।

२" आदर्श पत्र-लेखन " (१९७४), पृ० १ ।

कोम्पटन के सचित्र विश्वकोश में भी मिट्टी के फलकों पर लिखे गये प्राचीनतम पत्रों के विषय में विस्तार से जानकारी दी गयी है। उसमें कहा गया है कि प्रसिद्ध रोमन पत्र-लेखक सिसरो (१०६ - ४३ ई०पू०) से एक हजार वर्ष पहले पश्चिम एशिया के शासकों का ईजिप्त के फेरोह के साथ रोचक पत्र-व्यवहार हुआ करता था। मिट्टी के फलकों पर लिखे हुए उनके लगभग ३०० पत्रों का एक संग्रह सन् १८८७ ई० में ईजिप्त के एमेर्ना से खुदाई के दौरान प्राप्त हुआ था।[1]

शिप्ले के विश्ववाङ्मय कोश के अनुसार सबसे प्राचीन पत्र २०००-ई० पू० में बेबीलोन से प्राप्त होते हैं।[2]

संस्कृत साहित्य में महाकवि कालिदास के ग्रंथों में प्राचीनकालीन पत्र-लेखन के अनेक सन्दर्भ मिलते हैं। कालिदास भारतीय वाङ्मय के गौरव-पूर्ण कीर्तिस्तम्भ हैं। उनकी प्रतिभा से हमें अनेक ग्रंथरत्न प्राप्त हुए हैं जिनके माध्यम से उनके व्यापक और बहुविध ज्ञान का परिचय प्राप्त होता है। उनकी कृतियों में स्थान-स्थान पर निर्दिष्ट पत्र-लेखन-प्रक्रिया से तत्कालीन पत्र-लेखन पद्धति और सामग्री पर महत्वपूर्ण प्रकाश पड़ता है। उन्होंने अपने प्रसिद्ध महाकाव्य "कुमारसम्भवम्" के प्रथम सर्ग में लिखा है कि हिमालय प्रदेश की विद्याधर सुन्दरियां भूर्जपत्रों पर धातुरस (सिन्दूर अथवा गेरु) से अपने प्रेमियों के पास पत्र लिखा करती थीं जिनके अक्षर ~~स्थनि-के-सूंड़-पर-मिलनेवाले-बिन्दुओं-के-समान-सुन्दर-होते-थे~~

I; " Compton's Pictured Encyclopedia and Fact-Index " (1955), Vol-8, P; 171.

" More than a thousand Years before Cicero's time, the rulers of western Asia were keeping up a lively correspondence with the pharoah of Egypt. A collection of some 300 of their letters written on clay tablets was dug up at Amarna, Egpyt in 1887 "

2 " Dictionary of world Literature," P. 249.

हाथी के सूंड़ पर मिलनेवाले बिन्दुओं के समान सुन्दर होते थे ।[१]

कालिदास की सर्वाधिक लोकप्रिय नाट्यकृति "अभिज्ञान शाकुन्तलम्" में मदनलेख (प्रेम-पत्र) की तैयारी को सुन्दर वर्णन कियागया है । राजा दुष्यन्त पर आसक्त शकुन्तला को उसकी सखियां (प्रियवंदा और अनसूया) मदनलेख लिखने को बाध्य करती हैं । तपोवन में शकुन्तला द्वारा लेखन-सामग्री के अभाव की चर्चा पर प्रियवंदा यह सुझाव देती है कि -"शुकोदर के समान कोमल कमल-पत्र पर नाखूनों से अक्षर अंकित कर दें ।"[२]

महाकवि बाण की प्रसिद्ध गद्यकृति "कादम्बरी" में भी कृष्ण-कुमार पुण्डरीक द्वारा तमाल वृक्ष के पत्ते पर महाश्वेता के नाम लिखी गयी प्रणय-पत्रिका का सुन्दर वर्णन किया गया है ।[३] इन विविध सन्दर्भों से पत्र के प्राचीन आधार-फलकों की पर्याप्त जानकारी प्राप्त होती है ।

१" कुमारसम्भवम्" (सर्ग - १, श्लोक-७),
"कालिदास ग्रंथावली," ,
संपा० सीताराम चतुर्वेदी, पृ० २३२ ।

" न्यस्ताक्षरा धातुरसेन यत्र
भूर्जत्वचः कुंजरबिन्दु शोणाः ।
व्रजन्ति विद्याधरसुन्दरीणा-
मनंगलेख क्रिययोपयोगम् ।। "

२" अभिज्ञान शाकुन्तलम्" (अंक-३),
संस्कृत - हिन्दी व्याख्या ,
रामतेज पाण्डेय, पृ० १७७ ।

" एतस्मिन्शुकोदरसुकुमारे नलिनीपत्रे -
नखैर्निक्षिप्तवर्णं कुरु ।"

३" देखिए :- "कादम्बरी ", महाश्वेतावृत्तांत ,
व्याख्याकार पं० मोहनदेव पंत, पृ० ५०४ ।

इससे प्रकट होता है कि आज की तरह प्राचीनकाल में भी पत्राचार का महत्व था और लोग इसकी महत्ता से भली भांति परिचित थे । अंतर केवल इतना ही था कि पहले यातायात के साधन अधिक सरल न होने के कारण पत्रों के आने-जाने में असुविधा थी । किन्तु पत्र-प्रेमी मानव इससे भी मार्ग निकाल लेते थे । उन दिनों प्रियजन तक सन्देश-पत्र भेजने के लिए हंसों, कबूतरों, आदि पक्षियों का सहारा लिया जाता था । "महाभारत" के "नलोपाख्यान" के अध्ययन से ज्ञात होता है कि नल और दमयन्ती का पत्र-व्यवहार हंस के माध्यम से ही होता था ।[१] "चांद" के पत्र-विशेषांक में पत्र-लेखन की प्राचीनता प्रदर्शित करने के लिए दमयन्ती और हंस का एक सुन्दर चित्र दिया गया है । इस चित्र के नीचे दो काव्य-पंक्तियां भी लिखी गयी हैं जिनमें दमयन्ती हंस की चोंच में अपना प्रेम-पत्र रखकर उसे नल राजा तक पहुंचाने की सूचना देती है ।[२]

प्राचीनकाल में पक्षियों के अतिरिक्त राहगीरों, घुड़सवारों, विप्रों आदि के द्वारा भी पत्र भेजे जाते थे । "श्रीमद्भागवत" में उल्लेख है कि रुक्मिणी ने श्रीकृष्ण के पास अपना प्रणय-पत्र एक विप्र के द्वारा भेजा था ।[३] सम्बोधन शैली[४] के वैविध्य की दृष्टि से यह पत्र, संस्कृत साहित्य में उपलब्ध प्रणय-पत्रों में अद्वितीय समझा जाता है ।

---

१ "महाभारत", "नलोपाख्यान," टीकाकार पं० रामचन्द्र शास्त्री, पृ०६३ ।

२ "चांद," "पत्रांक", मई १९२८, पृ० १०८ ।

"लो ! ले जाओ, दे देना यह पत्र उन्हें ही किसी प्रकार ।
मेरे राजहंस नल होवें, करते जहां वसन्त-विहार ।।"

३ "श्रीमद् भागवत", दशम स्कन्द, अध्याय-५२, श्लोक-३७-४४ ।

४ "इस पत्र के सम्बोधनों की विस्तृत व्याख्या के लिए देखिए :-
" रुक्मिणी का प्रेम-पत्र : भगवान कृष्ण के नाम" (लेख),
" ज्ञानोदय", पत्र-विशेषांक, नवम्बर १९६३, पृ० १४२ ।

प्राचीनकाल में सन्देश-पत्र ले जाने वाले को "दूत" कहते थे ।[१] इसी कारण सन्देश-काव्य को "दूत-काव्य" भी कहा गया है ।[२] "मनुस्मृति" में दूत के लक्षणों की विस्तार से चर्चा की गयी है ।[३] महाकवि कालिदास का यक्ष मेघ को दूत बनाकर अपना सन्देश प्रिया यक्षिणी तक पहुंचाता है । कविवर बाण ने अपने "हर्षचरित" शीर्षक ग्रंथ में दूत अथवा पत्र-वाहक के लिए "लेख-हारक" शब्द का प्रयोग किया है । उसके लेख-हारक के वर्णन से तत्कालीन डाकव्यवस्था का भी संकेत मिलता है । इससे पता चलता है कि उन दिनों पत्र-वाहक को लम्बी यात्रा करनी पड़ती थी जिससे उसे काफी थकान का अनुभव होता था । उसकी वर्दी विशेष प्रकार की होती थी जो मटियाले रंग की पेटी से कसी जाती थी और लेख-मालिका या चिट्ठी डोर से बीचोबीच लपेट कर बंधी जाती थी ।[४] प्रसिद्ध ग्रीक इतिहासकार हेरोडट्स (Herodotus) ने भी अपने समय के "कुरियर" का ऐसा ही शब्द-चित्र अंकित किया है ।[५]

---

१ "अमरकोश", (२-१६) संपा० रघुनाथ शास्त्री, पृ० १८४ ।

"स्यात्सन्देशहरो दूत: - - - "

२ "संस्कृत के सन्देश काव्य", (१९६३), डा० रामकुमार आचार्य, पृ०७ ।

३ "मनुस्मृति" (७।६३-६६), सस्ता साहित्य वर्धक, बम्बई, पृ० २६०-६१ ।

४ "हर्षचरितम्" (उल्लास-२), व्याख्याकार, जगन्नाथ पाठक, पृ० ८९-९० ।

"अथ तेनानीयमानम्, अतिदूरगमनगुरुजङ्घाकाण्डम् , कार्दमिकचेल चीररिकानियमितोच्चण्डचण्डातकम्, प्रष्ठप्रेङ्खत्पटच्चरकपर्टघटितगल-ग्रन्थिम् ------- प्रविशन्तं लेखहारकमद्राक्षीत् ।"

५ "Compton's Pictured Encyclopedia and Fact-Index" Vol-II, P. 385 .

" Neither snow, nor rain, nor heat, nor night stays these Couriers from the swift Completion of their appointed rounds".

डाकियों के सेवा-सूत्र से पत्रों के वितरण की पद्धति मध्ययुगीन भारत में सबसे पहले शेरशाह सूरी (१४८६-१५४५) ने चलाई थी।[१] किन्तु भारत में आधुनिक ढंग की डाक-तार व्यवस्था जारी करने का श्रेय लार्ड डलहौजी को है। उसने पोस्ट-कार्ड चलाया और आधुनिक ढंग के डाक-घरों का निर्माण किया।[२] आज तो डाकसेवा मानव-सभ्यता का अभिन्न अंग बन गयी है। प्रसिद्ध अंग्रेजी लेखक एडवर्ड एवरेट (Edward Everett) ने लिखा है :-

"जब मैं देखता हूं कि लाखों - करोड़ों व्यक्ति पवित्र उत्साह के साथ अपने मनोभावों, विचारों और स्नेह को पत्रों में बन्द करके भेजते हैं और डाकखाने उन्हें समूचे देश में वितरित करते हैं तो डाक-घर को ईसाई धर्म के बाद आधुनिक सभ्यता का सबसे बड़ा सोपान मानने के लिए मुझे बाध्य हो जाना पड़ता है।"[३]

इस प्रकार पत्र-लेखन के विकास की कहानी मानव-सभ्यता के विकास के साथ जुड़ी हुई है। आज पत्र-लेखन हमारे जीवन-व्यवहार का अनिवार्य अंग तो है ही, हमारे सांस्कृतिक एवं साहित्यिक विचार-विनिमय का उत्कृष्ट माध्यम भी है।

---

१ "मध्यकालीन भारत" (१९७०), हरिशंकर शर्मा, पृ० ३६६।

२ "आधुनिक भारत" (१९७०), डा० वी० एस० भार्गव, पृ० १८६।

३ " When I contempalate the extent to which the moral sentiment, intelligence, the affections of so many million of people, sealed up by a sacred charm within the cover of a letter, daily cerculate, through a country, I am complled to regard the post-office, next to Christianity, as the right arm, of our modern Civilization."

-"Bartlett's Familiar Quotations" Thirteen Edition, P. 472.

हिन्दी में प्राचीनकाल से लेकर अब तक जो पत्र-साहित्य प्रकाश में आया है, उसमें दो प्रकार की पत्र-शैलियां मिलती हैं - एक प्राचीन शैली और दूसरी नवीन शैली । प्राचीन शैली संस्कृत से प्रभावित है और नवीन शैली पश्चिम से। अतः हिन्दी पत्र-साहित्य के सम्यक् अध्ययन के लिए संस्कृत और पश्चिम की प्रमुख भाषाओं में उपलब्ध पत्र-साहित्य का संक्षिप्त परिचय प्राप्त कर लेना आवश्यक होगा ।

संस्कृत में उपलब्ध पत्र-साहित्य का स्वरूप :

यद्यपि संस्कृत में पत्र-साहित्य की परम्परा ग्रीक और लैटिन के समान पुष्ट नहीं है, किन्तु इसका यह अर्थ नहीं लगाया जा सकता कि प्राचीन भारत में पत्र-लेखनकला का अभाव था । डा० वासुदेव उपाध्याय ने अपने "प्राचीन भारतीय अभिलेख" शीर्षक ग्रंथ में "ललित विस्तर" का सन्दर्भ देते हुए लिखा है कि "बुद्ध को लिपिशाला (पाठशाला) में विश्वामित्र द्वारा पत्र-लेखन सिखलाया गया था ।"[१] इससे स्पष्ट हो जाता है कि ई० पू० ६०० के समीप भारत में पत्र-लेखन कला का विकास हो चुका था । जैसा कि हम देख चुके हैं, मौर्ययुग के राजनीति ग्रंथ "अर्थशास्त्र" में भी राजा को दिवस के पांचवें भाग में मन्त्रि-परिषद के साथ पत्र द्वारा मंत्रणा करने का निर्देश दिया गया है । इसके अतिरिक्त श्रीमद् वररुचि-कृत "पत्र-कौमुदी," चिमनलाल दलाल द्वारा सम्पादित "लेख-पद्धति," बाल-कृष्ण त्रिपाठीकृत "प्रशस्तिकाशिका" आदि पुस्तकों के अध्ययन से विदित होता है कि संस्कृत साहित्य में पत्र-लेखन की कलात्मक परिपाटी भी विद्य-मान थी । इस प्रकार भारत में बहुत पहले से ही पत्र-लेखन कला का विकास हो चुका था ।

---

१ "प्राचीन भारतीय अभिलेख" (१९७०) पृ० १९६ ।

संस्कृत के प्राचीन नाटकों, कथा, चम्पू आदि में अनेक अलंकृत पत्र उपलब्ध होते हैं , यद्यपि ये पत्र वैयक्तिक न होकर कथानक के विकास के माध्यम मात्र हैं, तथापि तत्कालीन पत्र-लेखन की शैली तथा सामाजिक शिष्टाचार का ज्ञान प्राप्त करने के लिए ये पत्र अत्यन्त उपयोगी हैं । यही नहीं, कुछ पत्रों से ऐतिहासिक घटनाओं की पुष्टि भी होती है ।

संस्कृत साहित्य की विभिन्न विधाओं में उल्लिखित पत्रों के अतिरिक्त स्वतंत्र रूप में लिखे गये कुछ पद्य-बद्ध पत्र भी प्राप्त होते हैं । सांस्कृतिक दृष्टि ये पत्र बहुत महत्वपूर्ण हैं ।

संस्कृत साहित्य में आधुनिककाल के आरम्भ से प्रसिद्ध व्यक्तियों के वैयक्तिक पत्र भी प्रकाश में आये हैं । इन पत्रों का अपना पृथक् महत्व है । इस प्रकार संस्कृत में जो पत्र-साहित्य उपलब्ध होता है, उसे हम अधो-लिखित तीन वर्गों में विभक्त कर सकते हैं :-

(१) साहित्य की विभिन्न विधाओं में उल्लिखित महत्वपूर्ण पत्र ,

(२) स्वतंत्ररूप में लिखे गए पद्य-बद्ध पत्र और

(३) मनीषियों के वैयक्तिक पत्र ।

अब हम अनुक्रम से प्रत्येक वर्ग के पत्रों का संक्षिप्त परिचय प्राप्त करेंगे ।

संस्कृत साहित्य में सबसे प्राचीन गद्य-पत्र कविकुलगुरु कालिदास के "मालविकाग्निमित्रम्" नाटक में उपलब्ध होता है । यह पत्र अलंकृत होते हुए भी नितांत काल्पनिक नहीं है । यह पत्र सेनापति पुष्यमित्र ने अपने पुत्र राजा अग्निमित्र के नाम विदिशा से लिख भेजा था । इस पत्र में अग्निमित्र को सपरिवार प्रसन्नतापूर्वक अश्वमेध यज्ञ में सम्मिलित होनेका निमंत्रण दिया गया है । संस्कृत साहित्य का यह प्राचीनतम तथा महत्व-पूर्ण पत्र होने के कारण यहां हम इसे अविकल रूप में उद्धृत करते हैं ।

"स्वस्ति । यज्ञशरणात्सेनापतिः पुष्यमित्रो वैदिशस्थं पुत्रमायुष्मन्तमग्निमित्रं स्नेहात्परिष्वज्यानुदर्शयति । विदितमस्तु । योऽसौ राजयज्ञदीक्षितेन मया राजपुत्रशतपरिवृतं वसुमित्रं गोप्तारमादिश्य संवत्सरोपावर्तनीयो निरर्गलस्तुरगो विसृष्टः स सिन्धोर्दक्षिणे रोधसि चरन्नश्वानीकेन यवनानां प्रार्थितः । ततः उभयोः सेनयोर्महानासीत्संमदः ।

ततः परान्पराजित्य वसुमित्रेण धन्विना ।
प्रसह्य ह्रियमाणो मे वाजिराजो निवर्तितः ।।

सोऽहमिदानीमंशुमतेव सागरः पौत्रेण प्रत्याहृताश्वो यक्ष्ये । तदिदानीमकालहीनं विगतरोषचेतसा भवता वधूजनेन सह यज्ञसेवनायागन्तव्यमिति ।[1]

इस प्रकार यह एक निमन्त्रण-पत्र है । ऐतिहासिक और राजनैतिक दृष्टि से इसका बहुत बड़ा महत्व है । प्रेषक और प्रेष्य दोनों ऐतिहासिक पात्र हैं ।[2] प्रेषणीय बात अर्थात् अश्वमेध यज्ञ का निमन्त्रण भी एक -

---

१ "मालविकाग्निमित्रम् "(अंक-५),
संपा० एम० आर० काले, पृ० १०४-१०६ ।

२ "कालिदास" (१९६७), महामहोपाध्याय डा० वि० वि० मिराशी ,
पृ० ३ ।

"कालिदास ने अपने "मालविकाग्निमित्रं नाटक का कथानक शुंगवंशीय राजा अग्निमित्र के चरित्र से लिया है । यह अग्निमित्र मौर्यवंश का उच्छेद कर मगध-साम्राज्य को छीननेवाले सेनापति पुष्यमित्र का पुत्र था । इसका समय ईसा से लगभग १५० वर्ष पूर्व विद्वानों ने निर्धारित किया है ।"

ऐतिहासिक घटना है ।[1] पत्र में उल्लिखित अग्निमित्र के पुत्र वसुमित्र और यवनों के युद्ध की घटना भी ऐतिहासिक है ।[2] इस प्रकार इस पत्र से अनेक ऐतिहासिक एवं राजनैतिक तथ्यों पर प्रकाश पड़ता है । अत: श्री घनश्याम देवड़ा इसे प्राचीन भारत का प्रथम उपलब्ध ऐतिहासिक राजकीय पत्र मानते हैं ।[3]

पत्र-लेखन की प्राचीन शैली की दृष्टि से भी यह पत्र महत्वपूर्ण है । इससे ज्ञात होता है कि प्राचीन पत्रों का आरम्भ "स्वस्ति" शब्द से होता था । तदनन्तर प्रेषक और प्रेष्य का उपाधि-सहित नामोल्लेख किया जाता था और तत्पश्चात् प्रेषणीय बात लिखी जाती थी । गद्य-पत्रों में आवश्यकतानुसार पद्य का भी प्रयोग होता था । हिन्दी के प्राचीन और मध्यकालीन पत्रों में भी हमें यही परम्परागत पत्र-लेखन शैली के दर्शन होते हैं । ग्रामीण क्षेत्रों में तो प्राय: आज भी इसी शैली में पत्र लिखे जाते हैं ।

---

१ (क) महर्षि पतंजलि: "व्याकरण महाभाष्य", अध्याय-३, पाठ-२, आह्निक-१२३ । मोतीलाल बनारसीदास, पटना, पृ. १८३ ।

"(वयं) पुष्यमित्रं याजयाम: ।"

(ख) पं० कृष्णदत्त वाजपेयी: "प्राचीन भारत में अश्वमेध यज्ञ" (लेख), ना० प्र० पत्रिका, वर्ष-५२, अंक-१, पृ०-४ ।

"अयोध्या से मिले पाषाण लेख से ज्ञात होता है कि पुष्यमित्र शुंग ने दो अश्वमेध यज्ञ किये थे ।"

२ (क) महर्षि पतंजलि: "व्याकरण महाभाष्य," अध्याय-३, पाठ-२, आह्निक- १११ । मोतीलाल बनारसीदास, पटना, पृ. १७६

"अरुणद्यवन: साकेतम् ।"

(ख) डा० सत्यकेतु विद्यालंकार : "भारत का प्राचीन इतिहास" (१९६०), पृ० ४२८ ।

"पुष्यमित्र के शासन में यवनों ने भारत पर आक्रमण किया ।"

३ "ज्ञानोदय," पत्र-विशेषांक, नवम्बर १९६३, पृ० २६५ ।

महाकवि कालिदास के अन्य दो प्रसिद्ध नाटकों "विक्रमोर्वशीयम्"[1] तथा "अभिज्ञान शाकुन्तलम्"[2] में क्रमश: उर्वशी तथा शकुन्तला द्वारा लिखे गये प्रेम-पत्रों का उल्लेख भी मिलता है। किन्तु ये दोनों ही पत्र पद्य में लिखे गये हैं। इन दोनों पत्रों में विरह-व्याकुल नारी-हृदय का सुन्दर चित्र अंकित किया गया है।

कालिदास के बाद संस्कृत के जिन साहित्यकारों की कृतियों में पत्रों का उल्लेख मिलता है उनमें कविवर दण्डी, बाण, विशाखदत्त, भवभूति, क्षेमेन्द्र, हरिचन्द्र आदि के नाम उल्लेख्य हैं।

कविश्रेष्ठ दण्डी (५ वीं-६ठी शताब्दी) के "दशकुमारचरित"[3] के पंचम उच्छ्वास में कथा-नायिका अवन्तिसुन्दरी अपनी सखी बालचन्द्रिका द्वारा राजकुमार को एक पत्र लिख भेजती है। यह पत्र भी पद्य में लिखा गया है और विरह-व्यथा से ओतप्रोत है। कथा के उपसंहार में प्रमुख राजकुमारों को आज्ञापत्र भेजने का उल्लेख भी मिलता है।[4]

महाकवि बाण (६ठी शताब्दी) की दोनों गद्य-कृतियों- "कादम्बरी" और "हर्षचरित" में पद्य और गद्य में लिखे गये अलंकृत पत्र प्राप्त होते हैं। "कादम्बरी" के महाश्वेता वृत्तांत में कृष्णकुमार

---

१ देखिए:- "विक्रमोर्वशीयम्," अंक-२, श्लोक-१२,१३।

२ देखिए:- "अभिज्ञान शाकुन्तलम्," अंक-३, श्लोक-१५।

३ देखिए:- "दशकुमारचरित," पंचम उच्छ्वास, एम० आर० काले का अंग्रेजी अनुवाद, पृ० ५०।

४ वही, टीकाकार हरिहर शास्त्री, पृ० २६४।

"स्वस्ति श्री: पुष्पपुरराजधान्या:
श्री राजहंसभूपतिश्चचम्पानगरीमधिवसतो राजवाहन
प्रमुखान् कुमारानशास्या आज्ञापत्रं प्रेषयति।"

पुण्डरीक ताम्बूलवाहिका तरलिका द्वारा महाश्वेता के नाम जो प्रणय-पत्रिका भेजता है, वह पद्य में लिखी गयी है,[1] किन्तु कादम्बरी वृत्तांत में तारापीड द्वारा अपने पुत्र चन्द्रापीड के नाम प्रेषित पत्र, कवि बाण की समास-बहुला गद्य-शैली का उत्तम नमूना है। चन्द्रापीड दीर्घकाल से परिवार और प्रजाजनों से दूर चला गया था, इसलिए तारापीड पत्र द्वारा उसे उज्जयिनी लौटने का आदेश देते हुए लिखते हैं कि :-

" स्वस्त्युज्जयिनीत: सकलराजन्यशिखण्डशेखरीकृतचरणारविन्द: परमाहेश्वरो महाराजाधिराजो देवस्तारापीड: सर्वसम्पदामायतनं चन्द्रापीडमुदञ्चच्चारु चूडामणिमरीचिचक्रचुम्बन्युत्तमांगे चुम्बन्नन्दयति। कुशलिन्य: प्रजा:। किं नु कियानपि कालो भवतो द्रष्टस्य गत:। बलवदुत्कण्ठितं नो हृदयम्। देवी च सहान्त: पुरैर्म्लानिमुपनीता। अतो लेखवाचयन विरतिदेव प्रयाण कारणतां नेतव्या इति।"[2]

बाणभट्ट की द्वितीय गद्य-कृति "हर्षचरित" में हर्षदेव के भाई कृष्ण द्वारा कवि बाण को लिखे गये और मेखलक नामक दूत द्वारा भेजे गये पत्र की चर्चा है। इस पत्र में केवल इतना ही लिखा गया है कि "मेखलक से सन्देश समझकर बुद्धिमान आप काम को बिगाड़ने वाली देरी मत करें, यहाँ इतना ही लिखा जाता है, शेष मौखिक सन्देश मात्र होगा।[3]

---

१ देखिए:- "कादम्बरी" (पूर्वार्द्धम्), व्याख्याकार पं० मोहनदेव पंत, पृ० ५०४।

२ वही, पृ० ७१०।

३ "हर्षचरितम्" (उच्छ्वास-२), व्याख्याकार जगन्नाथ पाठक, पृ० ६०।

" मेखलकात्संदिष्टमवधार्य फलप्रतिबन्धी धीमता परिहरणीय: कालातिपात इत्येतावदत्रार्थजातम्। इतरद्वार्ता संवादनमात्रकम्। "

इस पत्र से ज्ञात होता है कि प्राचीनकालीन पत्र-व्यवहार में लिखित सन्देश के साथ मौखिक सन्देश भी भेजा जाता था । "हारावली" में दी गयी पत्र की व्याख्या में "वाचिक" अर्थात् मौखिक सन्देश का भी उल्लेख किया गया है ।[1]

संस्कृत के प्रसिद्ध नाटककार श्री विशाखदत्त (७ वीं शताब्दी) ने अपने "मुद्राराक्षस" नामक नाटक में "कूटलेख" अर्थात् जाली पत्र के सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत किये हैं । नाटक के तीसरे और पांचवें अंक में हमें चाणक्य द्वारा तैयार किये गये ऐसे कूटनीतिपूर्ण पत्र देखने को मिलते हैं । तीसरे अंक में चाणक्य चन्द्रगुप्त को एक प्रमाण-पत्र पढ़कर सुनाते हैं जिसमें चन्द्रगुप्त से विरत होकर मलयकेतु का आश्रय लेनेवाले व्यक्तियों की चर्चा है ।[2] पांचवें अंक में राक्षस की मुद्रा चुराकर उससे तैयार किया गया कूट-लेख सिद्धार्थक नामक दूत द्वारा मलयकेतु के पास भेजा जाता है । ऐसे पत्रों में प्रेषक आदि के स्थान पर प्राय: "कुतोऽपि कोऽपि" आदि शब्दों का प्रयोग किया जाता है ।[3] इस प्रकार "मुद्राराक्षस" के इन उल्लेखों से स्पष्ट होता है कि पत्र, विवाद और विशेष प्रसंगों में दस्तावेज़ का कार्य करते हैं ।

---

१ "हारावली," काव्यमाला संस्कृत सीरिज, पृ० ५४ ।
"वर्णदूत: स्वस्तिमुखो लेखो वाचिक हारक: ।"

२ "मुद्राराक्षसम्" (अंक-३), टीकाकार,
डा० रमाशंकर त्रिपाठी, पृ० १७८ ।
"स्वस्ति सुगृहीतनामधेयस्य देवस्य चन्द्रगुप्तस्य सहोत्थायिनां प्रधानपुरुषाणामितोऽपक्रम्य वध्यमलयकेतुमाश्रितां प्रमाणलेख्य पत्रमिदम् । - - - - - "

३ वही, (अंक-५), पृ० २७० ।
"स्वस्ति यथास्थानं कुतोऽपि कोऽपि कमपि पुरुषविशेषमवगमयति अस्मत्प्रतिपक्षं निराकृत्य दर्शिता कापि सत्यता सत्यवादिना । - - - - - "

"मुद्राराक्षस" के पांचवें अंक के "कूटलेख" के अंत में प्रयुक्त "लेखस्याशून्यार्थ"[1] शब्द से प्राचीन शिष्टाचार की एक विशिष्ट रीति का संकेत मिलता है। प्राचीनकाल में उच्च पदासीन व्यक्तियों को "सोपहार सन्देश-पत्र" भेजने की परम्परा थी। बाण भट्टकृत "हर्षचरित" में कुमार प्राग्ज्योतिषेश्वर द्वारा महाराज हर्षवर्धन को भेजे गये पत्र में भी "सन्देशमशून्यतां"[2] शब्द का प्रयोग किया गया है।

महाकवि भवभूति (७वीं - ८वीं शती) के "महावीरचरित" शीर्षक नाटक में परशुराम द्वारा लंकेश्वर रावण को प्रेषित पत्र का उल्लेख मिलता है। यह पत्र सम्बोधन-शैली के वैचित्र्य के कारण विशेष महत्व रखता है। इसमें पहले लंकेश्वर के बदले मंत्री माल्यवान् को सम्बोधित किया गया है।[3] शूर्पणखा इस सम्बोधन-वैचित्र्य से विस्मित होकर बीच में प्रश्न भी उठाती है कि - "क्यों प्रभुपद की परिपाटी छोड़कर लिखा गया है ?" इस प्रश्न का उत्तर देते हुए माल्यवान् बताते हैं कि "इसीमें परम माहेश्वर रावण को अभिनन्दित करके कहता है - आपको मालूम होना चाहिए कि हमने दण्डकारण्य तीर्थों में उपासनाँ करनेवाले को अभयदान दिया है - - - -" इस प्रकार यह पत्र एक और जहां परशुराम

---

१ "मुद्राराक्षसम्" (अंक -५), टीकाकार डा० रमाशंकर त्रिपाठी पृ० २७२ "--- मयापि लेखस्याशून्यार्थं किंचिदनुप्रेषितं तदुपगमनीयम् ।---"

२ "हर्षचरितम्" (उच्छ्वास-७), व्याख्याकार जगन्नाथ पाठक, पृ० ३८३ । "--- अस्मत्स्वामिना सन्देशमशून्यतां नयता ---- "

३ "महावीरचरितम्" (अंक-२), व्याख्याकार, रामचन्द्र मिश्र, पृ०२४, "स्वस्ति । महेन्द्रद्वीपात्परशुरामो - लंकायाममात्यं माल्यवन्तमभ्यर्हयति- "

और रावण के पारस्परिक सम्बन्ध पर प्रकाश डालता है, वहां दूसरी ओर सामाजिक शिष्टाचार के व्युत्क्रम को भी प्रकट करता है । पत्र-लेखन की परिपाटी के अनुसार एक ही पत्र में जब मंत्री और राजा दोनों के प्रति सम्बोधन हो तब पहले राजा को सम्बोधित करना चाहिए । नाटककार ने सम्भवत: परशुराम की रोषयुक्त मन: स्थिति का संकेत करने के लिए इस विचित्र रीति को अपनाया होगा । जो भी हो, इस पत्र में परशुराम का तेजस्वी व्यक्तित्व स्पष्टरूप से झलकता है ।

कविवर क्षेमेन्द्र (११ वीं शताब्दी) के "बोधिसत्वावदानकल्पलता" शीर्षक ग्रंथ में अशोक के पुत्र कुणाल के सच्चरित्र, दृढ़ संकल्प और अपूर्व त्याग का वर्णन है । इसमें तक्षशिला के प्रधान व्यक्ति कुंजरकर्ण के नाम सम्राट अशोक की ओर से लिखे गये पत्र का भी उल्लेख है । वस्तुत: यह पत्र अशोक की पत्नी महारानी तिष्यरक्षिता ने युवराज कुणाल से बदला लेने के लिए लिखा था । सम्राट अशोक जब विदेश गमन पर थे, तब विमाता तिष्यरक्षिता ने कुणाल से एक कुप्रस्ताव किया जिसका कुणाल ने स्पष्ट इन्कार कर दिया और विमाता के प्रस्ताव की भर्त्सना की । इस भर्त्सना से उत्तेजित होकर तिष्यरक्षिता ने अशोक की मुद्रा से अंकित एक पत्र कुंजरकर्ण के पास भेजा जिसमें सम्राट की ओर से आदेश देते हुए कहा गया था कि मेरे दुश्चरित पुत्र को नेत्रविहीन कर देश-निकाल दिया जाय ।[१] इस प्रकार पत्र पर राजमुद्रा अंकित होने से कुंजरकर्ण ने आदेशानुसार निर्दोष

---

१ "श्रीमदशोकदेवस्तक्षशिलाधिपं श्रीकुंजरकर्णं
सम्बोधयति यथा मे निरपत्रय: कुचरितमैत्री-
परिरत्रस्तचारित्र: पुत्रमुख शत्रुरपवित्र:-
पितृकलत्राभिलाषविपात्री कृतनेत्र शतपत्र: समुत्षा-
टितलोचनमणिनिर्वसनो निर्वस्यताम् ।"

- उद्धृत : "प्राचीन पत्र-लेखन" (लेख),
डा० हीरानन्द शास्त्री, "विशालभारत," जनवरी १९३८, पृ० ६० ।

एवं साधु-चरित कुणाल को अंधा बनाकर देश से निकाल दिया । "मुद्राराक्षस" के पूर्वचर्चित "कूटलेख" की तरह यह पत्र भी, राजकीय पत्रों में, मुद्रा कितना महत्वपूर्ण स्थान रखती है, इस तथ्य की ओर संकेत करता है ।

कवि हरिश्चन्द्र (११ वीं - १२ वी० शताब्दी) के "जीवन्धर चम्पू" में कई स्थलों पर विविध प्रकार के पत्र उपलब्ध होते हैं । चतुर्थ लम्भ में नायिका गुणमाला द्वारा नायक जीवन्धर के नाम लिखा गया पत्र विप्रलम्भ शृंगार का उत्तम उदाहरण है । इस पुस्तक में "पत्र" के लिए "पत्र" और "पत्रिका" शब्दों का ही प्रयोग किया गया है। अन्य कृतियों के समान पत्र के स्थान पर "लेख" शब्द का प्रयोग नहीं किया गया । जैसे, - - - क्षणं नवकदलीकानने कालं क्षिपन्ती क्रमेण पत्रिकां विलिख्य कंचनक्रीडाशुकं जीवन्धराय प्रोहेषीत ।"[१] इस चम्पू के दसवें लम्भ में एक "कपट-पत्र" का उल्लेख भी मिलता है जो प्रतिनायक काष्ठांगार द्वारा नायक के मामा को लिखा गया है । इस तरह विविध प्रकार के पत्रों की दृष्टि से प्रस्तुत चम्पू एक उल्लेखनीय कृति है ।

साहित्य की विभिन्न विधाओं में प्राप्त इन पत्रों के अतिरिक्त संस्कृत भाषा में स्वतंत्र रूप से लिखे गये कुछ पद्य-बद्ध पत्र भी मिले हैं । इस प्रकार के तीन पत्रों का उल्लेख डा० सुरेशचन्द्र बनर्जी ने "इन्डियन - हिस्टोरिकल क्वाटर्ली" में प्रकाशित अपने एक लेख[२] में किया है । इनमें महाराज कनिक (प्रथम-द्वितीय शताब्दी) और बौद्ध भिक्षु नागार्जुन (तृतीय - चतुर्थ शताब्दी) से सम्बद्ध लेख विशेष महत्वपूर्ण हैं । महाराज कनिक को प्रेषित पत्र में कुलमिलाकर ८५ पद्य हैं और भिक्षु नागार्जुन द्वारा राजा उदयन को लिखे गये पत्र में १२३ पद्य हैं । ये दोनों ही पत्र प्राचीन भारतीय संस्कृति के प्रतीक हैं ।

---

१ "जीवन्धर चम्पू" (लम्भ-४, श्लोक-३१), भारतीय ज्ञानपीठ, काशी, पृ०-८७ ।

२ "A Study of the Epistolary and Documentary Literature in Sanskrit," I.H.Q., Spt., Dec. 1958, P. 226-27.

डा० वासुदेवशरण अग्रवाल ने भी अपने "हर्षचरित : एक सांस्कृतिक अध्ययन" शीर्षक ग्रंथ में भिक्षु नागार्जुन के पत्र का उल्लेख किया है । किन्तु यह पत्र राजा उदयन के नाम न होकर राजा सातवाहन के नाम है । "सुहृल्लेख" नाम से प्रसिद्ध इस पत्र का अनुवाद तिब्बतीभाषा में अभीतक सुरक्षित है ।[1] इन पत्रों से विदित होता है कि सुदूरवर्ती भारतीय व्यवहार में धार्मिक एवं प्रेरणात्मक पद्य-पत्र लिखने की प्रथा प्रचलित थी ।

संस्कृत में मनीषियों के वैयक्तिक पत्रों की सुव्यवस्थित परम्परा १८ वीं शताब्दी के उत्तरार्ध से देखने को मिलती है । डा० हीरालाल शुक्ल ने अपने शोधप्रबन्ध "आधुनिक संस्कृत साहित्य" में "पत्र-लेखन" शीर्षक एक स्वतंत्र अध्याय में इस सम्बन्ध में विस्तार से चर्चा की है । उनके कथनानुसार "आधुनिक संस्कृत साहित्य में वैयक्तिक पत्रों का प्रारंभ करने का श्रेय श्रीमती मनोरमा तम्बुराटी (१७६०-१८२८) एवं तद्युगीन केरलाधिपति कार्तिक तिरुनाल महाराज को है । ये दोनों एक दूसरे पर आसक्त थे । दोनों विवाहित थे । अतः प्रेम परकीय था । दोनों के मध्य जिन प्रेम-पत्रों का आदान-प्रदान हुआ है, उन्हें तिरुवनंतपुरम् के राजकीय संग्रहालय में (अमुद्रित) देखा जा सकता है ।"[2]

इसके अतिरिक्त श्रीनिवास दीक्षित शास्त्री (१८५०-१९०१) के अनेक पत्र विविध संस्कृत पत्रिकाओं में प्रकाशित हैं जिनमें साहित्यिक चर्चा अधिक है । कुच्चि रामवर्म (राजर्षि) वलिय तम्बुरान (१८५३-१९३२) के अनेक पत्र "राजीय लेखमाला" में संगृहीत है जिसका सम्पादन पुन्नरशेरि नीलकंठ शर्मा (१८५८-१९३५) ने किया था । इसमें सम्पूर्ण भारत का प्रतिनिधित्व देखने को मिलता है । श्री अप्पा शास्त्री राशि वडेकर (१८७३-१९१३) के द्वारा लिखे गये अबतक १४१ पत्र प्राप्त हुए हैं ।[3] इस प्रकार संस्कृत का आधुनिककालीन पत्र-साहित्य विकास के पथ पर बराबर बढ़ रहा है ।

१" हर्षचरित : एक सांस्कृतिक अध्ययन "(१९६४), पृ० २०२ ।

२" आधुनिक संस्कृत साहित्य "(१९७१), पृ० १५२ ।

३" वही, पृ० १५५-५६ ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि संस्कृत साहित्य में प्राचीनकाल से लेकर अब तक अनेक महत्वपूर्ण पत्र उपलब्ध होते हैं । यद्यपि प्राचीन संस्कृत साहित्य में प्राप्त पत्र वैयक्तिक नहीं हैं, फिर भी इतिहास-प्रसिद्ध पात्रों एवं घटनाओं से सम्बन्धित होने के कारण पत्रसाहित्य की चर्चा में इनकी उपेक्षा नहीं की जा सकती । जैसा कि हम पूर्ववर्ती पृष्ठों में देख चुके हैं, संस्कृत में आधुनिककाल के आरम्भ से ही पत्र-साहित्य का एक स्वतंत्र विधा के रूप में विकास हो रहा है । अतः हम श्री नन्दकिशोर तिवारी,[1] आचार्य पंडित सीताराम चतुर्वेदी[2] आदि विद्वानों के इस मत का समर्थन नहीं कर सकते कि संस्कृत साहित्य में पत्र-साहित्य का अभाव है । संस्कृत साहित्य में उपलब्ध पत्रों का सबसे बड़ा महत्व इस बात में है कि १९ वीं शती के पूर्वार्द्ध तक लगभग समस्त भारतीय आर्यभाषाओं में पत्र-लेखन की शैली संस्कृत की अनुवर्तिनी रही है । हिन्दी की प्राचीन पत्र-शैली भी इसका अपवाद नहीं है ।

पाश्चात्य पत्र-साहित्य का संक्षिप्त विकास :

पत्र-साहित्य व्यक्ति के अंतर्बाह्य, उसके परिवेश और युग का रोचक और प्रभावशाली ढंग से ज्ञान करानेवाली विधा है । यही कारण है कि संसार की सभी विकासशील भाषाओं में पत्र-साहित्य को बड़ा महत्व दिया जाता है और उसके भण्डार में वृद्धि करने के लिए बराबर गम्भीर प्रयास होते रहते हैं । पाश्चात्य साहित्य में, विशेषतः अंग्रेजी में इसका खूब विकास हुआ है । अंग्रेजी में प्रकाशित विश्व-कोशों, समालोचना-ग्रंथों, पत्र-संग्रहों की भूमिकाओं आदि में पाश्चात्य पत्र-साहित्य का विस्तार से परिचय दिया गया है । हिन्दी में इसकी विस्तृत- चर्चा

---

१ "चाँद," पत्रांक, मई १९२८, सम्पादकीय टिप्पणी ।

२ "साहित्यानुशासनम्"

(वि० सं० २०२६), पृ० १००१ ।

"चाँद" के पत्र-विशेषांक तथा डा० रामअवध द्विवेदी के "साहित्यरूप" शीर्षक समीक्षा-ग्रंथ में मिलती है । इन सबको दृष्टि में रखते हुए यहाँ हम ग्रीक, लैटिन, अंग्रेजी आदि के पत्र-साहित्य का संक्षिप्त विकास निरूपित करते हैं ।

"अमेरिकाना विश्वकोश" में, प्रकाशित[1] पत्र-साहित्य को तीन श्रेणियों में विभाजित किया गया है :-

(१) पुस्तक में तत्काल समावेश करने के उद्देश्य से लिखे गये पत्र,

(२) सामयिकों को लिखे गये पत्र और

(३) वैयक्तिक अथवा मैत्री-भाव से लिखे गये पत्र जो बाद में सामान्य पाठकों के लिए सुलभ हो जाते हैं ।

इनमें से तृतीय श्रेणी के पत्र ही सबसे अधिक व्यापक और रोचक हैं । अतः हम इन पत्रों पर ही विचार करेंगे । यद्यपि ये पत्र सामान्य लोगों को लक्षित कर नहीं लिखे गये हैं, किन्तु इनमें निहित ज्ञान एवं मनोरंजन की बहुमूल्य सामग्री के कारण ही कालान्तर में प्रकाशित होकर सर्वसुलभ बन गये हैं ।

पश्चिम में पत्र-साहित्य की परम्परा का आरम्भ भी अन्य साहित्य-रूपों के समान ग्रीक भाषा से ही माना जाता है । जिस प्रकार हमारे प्राचीनतम साहित्य का प्रारम्भ वैदिक संस्कृत से होता है, उसी प्रकार पश्चिम के सभी साहित्य-रूपों का उत्स ग्रीक में खोजा जाता है ।[2]

I " Encyclopedia Americana," Vol.-I7, P. 308.

" Letters (usually messages written to persons for special purposes only) which are put into print may be divided into three categories:

(I) Those designed for immediate inclusion in books,

(2) Those written to periodicals and

((3) Personal or friendly letters, later offered to general readers. "

2. A Letter Book", Edited by George Saintsbury, Introduction.

" Besides, for practical purposes all our literature begins withGreek."

ग्रीक में पत्रों को इतना महत्व दिया गया था कि प्राय: वक्तृता और अलंकार-शास्त्र की शिक्षा पत्रों द्वारा और पत्रों के रूप में दी जाती थी।[1] ग्रीक में पत्र-साहित्य का आरम्भ ईसा के लगभग छह शताब्दी पूर्व माना जाता है।[2] सबसे पहला ग्रीक पत्र-लेखक फेलेरीज़ (५७० ई० पू०) हुआ है। उसने १४८ पत्र लिखे हैं।[3] दूसरा प्रसिद्ध पत्र-लेखक हेलेनिक्स विश्वविख्यात दार्शनिक सुकरात का समकालीन था। उसके १२ पत्र अब भी सुरक्षित हैं। इसके बाद के पत्र-लेखकों में प्लेटो (४२७ ई० पू०) और ईसोक्रेट्स (४३६-३३८ ई०पू०) के नाम उल्लेख्य हैं। साहित्यिक दृष्टि से ईसोक्रेट्स के पत्र अपेक्षाकृत अधिक सुन्दर हैं। उसके नौ पत्र उपलब्ध होते हैं। ग्रीस की तत्कालीन सामाजिक और राजनैतिक स्थिति को समझने के लिए ये पत्र अत्यन्त उपयोगी हैं। इसी क्रम में आगे अरस्तू के पत्र उपलब्ध होते हैं। वह अपने समय में ग्रीक का सबसे बड़ा दार्शनिक था। उसके पत्र साहित्यिक दृष्टि से महत्वपूर्ण नहीं हैं, किन्तु इनकी प्रसिद्धि इस बात में है कि ये अरस्तू द्वारा लिखे गये हैं। इसके बाद लगभग २५० वर्ष तक साहित्यिक दृष्टि से लिखे पत्र नहीं पाये गये। रोमनसाम्राज्य के विस्तार के साथ ही ग्रीक भाषा और साहित्य से उसका सम्पर्क छूटता गया और शनैः शनैः वह लैटिन की ओर झुकता गया।

रोमन-साम्राज्य की स्थापना से पत्र-लेखन की कला का भी विकास हुआ। लैटिन का पत्र-साहित्य ग्रीक की अपेक्षा अधिक समृद्ध है। यद्यपि पश्चिम की पत्र-लेखन कला में प्रौढ़ता पांचवी शती ईसा पूर्व में आ गयी थी,[4] किन्तु पत्र-लेखन की स्वाभाविक क्षमता जो हमें सिसरो,

---

१ नन्दकिशोर तिवारी: 'चांद', पत्रांक, मई १९२८, सम्पादकीय विचार

२ -वही- -वही- -वही-

३ -वही- -वही- -वही-

४ J.T. Shipley: "Dictionary of World Literature" P. 249.

"In the west his maturity of the letter may be dated near the end of the 5th C.B.C. (in Greece)."

सैनका, प्लिनी आदि रोमन पत्र-लेखकों में दिखाई देती है, वह ग्रीक पत्र-लेखकों में नहीं मिलती ।

टूलीयस सिसरो (१०६-४३ ई०पू०) का स्थान रोमन-पत्र-लेखकों में अग्रतम है । उसके द्वारा प्रेषित और प्राप्त पत्रों की संख्या क्रमश: ८६४ और ९० हैं । पत्र-लेखन को कला के रूप में प्रतिष्ठित करने का श्रेय उसीको दिया जाता है । प्रत्येक युग के सर्वोत्तम पत्रों में पाये जानेवाले तत्व-वार्तालाप की उत्कृष्टता और घनिष्ठ आत्मीयता उसके पत्रों में सर्वत्र विद्यमान हैं ।[१] साहित्य के अतिरिक्त इतिहास की दृष्टि से भी उसके पत्र महत्वपूर्ण हैं ।

सिसरो के बाद ल्यूसीयस सेनका (सी० ४ई० पू०-६५ ई०) ने पत्र-साहित्य का भण्डार भरा । वह नीरो नामक रोमन सम्राट् का शिक्षक था । उसने अपने मित्र नाम १२४ नीति-विषयक पत्र लिखे हैं । इन पत्रों में हमें ओजोपूर्ण सम्वादकी छटा दिखाई पड़ती है । इसके बाद के पत्र-लेखकों युवा प्लिनी (६१ । ६२ पूर्व- ११४ ई०) का नाम विशेषरूप से स्मरणीय है । उसके द्वारा रोम के राजा त्रेजन को लिखे गये पत्रों में पूर्व के लोक-जीवन और व्यवहार की स्पष्ट झलक मिलती है । छठी शताब्दी में फ्लोरेन्टेस, रेलसीफोन, लेबेनियस आदि प्रसिद्ध पत्र-लेखक हुए हैं । तीसरी से पांचवीं शताब्दी का पत्र-साहित्य ईसाई गिरजाघरों और उनके पादरियों के कार्यों से ही विशेषत: सम्बन्धित था ।

I." Compton's Pictured Encyclopedia and Fact-Index",Vol.-8,P.171.

" Letter writing as an art began, so far as we know, with Cicero. His letters have the Conversational Quality and personal touch that are found in the best letters of all ages."

मध्ययुग में पत्रों का प्रचार तो अवश्य बढ़ा, किन्तु रिटारिक अथवा वक्तृता-शास्त्र के असीम प्रभाव से वे रूढ़िग्रस्त और निर्जीव होने लगे । इस कथन का एक ही महत्वपूर्ण अपवाद था । ग्यारहवीं शताब्दी में फ्रांस के एक नवयुवक विद्वान् एबिलार्ड ने अपनी प्रेयसी हेल्वायज़ा को जो पत्र लिखे थे, वे आत्मीयता और सहज सम्वेदना से ओत-प्रोत हैं । मध्यकाल के समाप्त होने पर पत्र फिर प्राचीन ग्रीक और लैटिन आदर्श की ओर झुके ।[१]

अंग्रेजी पत्र-साहित्य का विकास-काल १५वीं शताब्दी से आरम्भ होता है । इसमें सबसे पहला पत्र-संग्रह "पैस्टन लैटर्स" (१४२२-१५०६) शीर्षक से प्राप्त होता है । इसमें डेढ़ हज़ार से अधिक पत्र संगृहीत हैं । ये पत्र इंग्लैण्ड के तत्कालीन इतिहास के अनेक महत्वपूर्ण पहलुओं पर प्रकाश डालते हैं ।

अंग्रेजी पत्र-साहित्य के इतिहास में १६वीं तथा १७वीं शताब्दी का भी विशेष महत्व है । इस काल में जिन लेखकों के पत्र प्रकाश में आये उनमें फ्रांसीस बेकन (१५६१-१६२६), सर फिलीप सिडनी (१५५४-१५८६), जान डान (१५७१ । १५७२-१६३१) आदि के नाम उल्लेखनीय हैं । डोरोथी ओस्बोर्न (१६२७-१६९५) द्वारा अपने भावी पति विलियम टेम्पल के नाम लिखे गये पत्र १७ वीं शती के सबसे सहज और मोहक पत्र हैं ।

१८ वीं शताब्दी अंग्रेजी साहित्य के लिए एक दृष्टि से "पत्र-युग" ही था । प्रायः सभी व्यक्तियों ने पत्र लिखे और आश्चर्यजनक संख्या में उत्तम पत्र इसी शताब्दी में लिखे गये ।[२] इस काल में पत्र-साहित्य की

---

१ डा० रामअवध द्विवेदी: "साहित्यरूप" (वि०सं० २०२३), पृ० १४३

२ George Saintsbury : Editor " A Letter Book " (1922), Introduction, P. 21.

"In eighteenth Century everybody wrote letters : and a surprising number of people wrote letters well."

आश्चर्यजनक प्रगति में परिष्कृत डाक-सेवा का योग भी कम महत्वपूर्ण नहीं है । परिष्कृत डाक-सेवा के कारण वैयक्तिक हंसी-मजाक और गपशप को पत्रों में स्थान मिला । इस शताब्दी का सर्वप्रथम पत्र-लेखक डीन जोनथन स्विफ्ट माना जाता है । पत्रों में अन्त:स्फूर्त भावों को आकर्षक ढंग से व्यक्त करने की कला में वह अत्यन्त निपुण था ।[1] उसके पत्र अंग्रेजी साहित्य की बहुमूल्य थाती हैं ।

अंग्रेजी में वैयक्तिक पत्रों को व्यवस्थित ढंग से सर्वप्रथम प्रकाशित करने का प्रयास एलेक्जेण्डर पोप (१६६६-१७४४) ने किया ।[2] उसने स्विफ्ट, ब्रूक आदि मित्रों को लिखे हुए पत्र पुन: प्राप्त किये और उन्हें सुव्यवस्थित ढंग से प्रकाशित किया । पोप के इस प्रयास के बाद कुछ लेखक सचेत होकर पत्र लिखने लगें । फिलो डोमर आदि में यह प्रवृत्ति स्पष्ट रूप से दृष्टिगत होती है । इस शताब्दी के प्रमुख पत्र-लेखकों में चेस्टर फील्ड, विलियम काउपर, ग्रे, चार्ल्सलेम्ब, एडीसन, गोल्डस्मिथ, जानसन आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेख्य हैं ।

अर्ल चेस्टरफील्ड द्वारा अपने पुत्र के नाम लिखे गये पत्र साहित्यिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं । विलियम काउपर (१७३१-१८००) अपने समय का श्रेष्ठ पत्र-लेखक था । डब्लू बेनहाम ने उसके पत्रों का एक संग्रह प्रकाशित कराया है । स्वसम्पादित पत्र-संग्रह की भूमिका में श्री बेनहाम महोदय ने

I "Letters of Great Writers " (1912), Edited by Hedley V. Taylor, Introduction, P. XXiv

" Swift knew the charm of the spontaneous epistle at aspurt without lifting his elbow from the table."

2" Encyclopedia Americana."
Vol.- I7, P. 309.

लिखा है कि काउपर के पत्रों का सौंदर्य, उसकी कविता के समान उसकी सहाजिकता एवं निष्कपटता में निहित है । अपनी प्रथम काव्य-रचना की तरह उसने पत्र लिखते समय कभी उनके प्रकाशन का विचार नहीं किया[१]। इन्हीं विशेषताओं के कारण उसके पत्रों को सर्वाधिक प्रसिद्धि प्राप्त हुई है । ग्रे , लैम्ब, एडीसन, और गोल्डस्मिथ के पत्र भी साहित्यिक दृष्टि से उच्चकोटि के माने जाते हैं ।

अंग्रेजी पत्र-साहित्य में डा० सैम्यूअल जानसान (१७०९-१७८४) के पत्रों को विशेष सम्मान प्राप्त है । उसके पत्रों का सम्पादन आर०डब्लू० चैपमैन ने तीन जिल्दों में किया है । चैपमैन साहब ने इस पुण्यकार्य में अपने जीवन के पच्चीस वर्ष लगा दिये थे । लन्दन से प्रकाशित "टाइम्स" के साहित्यिक विशेषांक[२] में चैपमैन महोदय द्वारा सम्पादित डा० जानसन के पत्रों पर विस्तृत समीक्षा प्रकाशित हुई थी । डा० जानसन के पत्र उसके व्यक्तित्व के अध्ययन के लिए अत्यन्त उपयोगी हैं ।

१९वीं शताब्दी में भी पत्रों का प्रकाशन अविरत रूप से जारी रहा । इस शताब्दी के प्रसिद्ध पत्र-लेखकों में लार्ड बायरन (१७८८-१८२४) का स्थान महत्वपूर्ण है । उसका पत्र-साहित्य १३ खण्डों में प्रकाशित होने पर भी अपूर्ण है । " आइ माय हार्ट यूथ " खण्ड-१ के सम्पादक श्री - लैसीआ मर्चन्ड ने बायरन के पत्रों की विशेषताओं पर प्रकाश डालते हुए लिखा है कि " यह बायरन के पत्रों की निश्छलता और संवेदनशीलता -

---

I." Letters of William Cowper " (1914), P. XI

" The Charm of Cowper's letters, like that of his poetry, lies first of all in his naturalness and sincerity." He never dreamt of his letters being published when he wrote them. It was so with his first poems."

2."The Times Literary Supplement,"

Friday September 18, 1953, P. 590.

ही है जो उन्हें १९ वीं शताब्दी के ढेर सारे साहित्यिक पत्र-व्यवहार से ऊपर उठा लेती है ।[1]

इस शताब्दी के अन्य प्रारम्भिक पत्र-लेखकों में जान कीट्स (१७९५-१८२१), हर्टले कोलरिज (१७९६-२८४९), चार्ल्स डिकन्स १८१२-१८७०) आदि के नाम स्मरणीय हैं ।

कवि कीट्स के निजी पत्रों के सम्बन्ध में, जो उसने फेनी ब्राउन के नाम लिखे थे, बड़ा विवाद रहा । कुछ समीक्षकों को इन पत्रों में इन्द्रिय-लोलुपता का आभास हुआ तो कुछ आलोचकों ने महसूस किया कि जो कीट्स के प्रेम को नहीं समझ सकता वह उसके काव्य को नहीं समझ सकता । हर्टले कोलरिज के पत्रों का एक संग्रह सन् १९३६ ई० में आक्सफर्ड युनिवर्सिटी प्रेस से प्रकाशित हुआ है जिसमें अधिकतर पारिवारिक पत्र ही संकलित हैं । चार्ल्स डिकन्स ने अपनी पुस्तकों के समान अपने पत्रों में भी मनोरंजन की भरपूर सामग्री परोस दी है ।

इस शताब्दी में कुछ दम्पतियों के बीच लिखे गये प्रेम-पत्र भी प्रकाश में आये, जिनमें श्रीमान और श्रीमती ब्राउनिंग, थोमस कार्लाइल और जेन वेल्श आदि का पत्र-व्यवहार विशेष महत्व रखता है । फेनी ब्राउन ने कवि कीट्स के नाम लिखे पत्रों का भी पृथक् महत्व है । सन् १८२० से १८२४ के बीच लिखे गये उसके पत्रों का एक संग्रह आक्सफर्ड युनिवर्सिटी प्रेस से प्रकाशित हुआ है । फेनी ब्राउन ने ये पत्र उस समय लिखे हैं जब उसकी उम्र केवल बीस वर्ष की थी । उसके पत्रों में प्रतिबिम्बित

I. " I my hot youth " : Byron's Letters and Journals, Vol.-I (1973), Introduction, P. I.

" It is frankness and humanity of Byron's Letters which lifts them above the great bulk of literary correspondence in the nineteenth century."

चारित्रिक विशेषताओं से यह प्रतीति होती है कि उसमें कवि कीटस की पत्नी बनने की योग्यता पूर्णरूपेण विद्यमान थी।[1]

इस शताब्दी के उत्तरार्द्ध में "लाइफ एण्ड लैटर्स" शीर्षक से अनेक पुस्तकें प्रकाशित हुईं। इसी काल में जार्ज बर्नार्ड शॉ (१८५६-१९५०) ने एलेन टेरी और श्रीमती पेट्रिक कोम्पबेल के साथ हुए अपने पत्र-व्यवहार को प्रकाशित किया। एलेन टेरी के साथ हुए बर्नार्ड शॉ के पत्र-व्यवहार का महत्व प्रकट करते हुए श्री ओंकार शरद ने लिखा है कि "इन्हीं पत्रों से शॉ का वह प्रेमिक रूप भी संसार के सामने आया जिसरूप को दुनियां से वह सदा छिपाता रहा। एलेन टेरी की दो सौ प्रेमपगी पातियां और इससे कुछ कम संख्या में शॉ के पत्रों का संकलन विश्व के बौद्धिकप्रेमियों के लिए महान् प्रेरणा की वस्तु बना।"[2] एक अन्य प्रसिद्ध आयरीश कवि विलियम बटलर यीट्स (१८६५-१९३९) के पत्र भी इस शताब्दी के उत्तरार्द्ध में प्रकाशित पत्र-साहित्य में अपना अलग स्थान रखते हैं। इस प्रकार अंग्रेजी का पत्र-साहित्य अत्यन्त विपुल एवं समृद्ध है।

फ्रांस और अमेरिका में भी पत्र-साहित्य का स्तरीय विकास हुआ है। फ्रांस के सबसे प्राचीन पत्रों में हैलोप (ए० डी० ११६४) और एबेलार्ड (१०७९-११४२) के पत्र उल्लेख्य हैं। पश्चिम के मध्ययुगीन पत्र साहित्य में अपनी सहज सम्वेदना के कारण इस प्रेमीयुगल के पत्रों को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है। फ्रांसीसी पत्र-साहित्य में कला की दृष्टि से

---

१ "Letters of Fanny Browne to Fanny Keats" (1936), Edited by Fred Edgcumbe, Introduction, P. XIV.
"These letters show Fanny-Brawne, who was but twenty years of age, as a young woman of remarkable perception and imegination, keen in the observance of character and events, possessing an unusual critical faculty and intellectually fitted to become the wife of Keats."

२ "देखा, सुना, पढ़ा": "गुम-शुदा चिट्ठियां," पृ० २३९।

मेडम डी सेविंग्न (१६२६-१६९६) को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। उसे "पत्र-लेखन की रानी" भी कहा गया है।[1] इसी प्रकार, नेपोलियन बोनापार्ट के बारे में कहा जाता है कि उसने अपने शासन-काल के दौरान ५४,००० से ७०,००० तक पत्र लिखे थे।[2] उसके अबतक ४१००० पत्र छप चुके हैं। इस प्रकार फ्रांसीसी भाषा का पत्र-साहित्य पर्याप्त समृद्ध है।

अमेरिकन पत्र-साहित्य की प्रगति भी प्रशंसनीय है। वहां - बेन्जामीन फ्रेंकलीन (१७०६-१७६०) और राल्फ एमर्सन (१८०३-१८८२) के पत्र कई खण्डों में प्रकाशित हो चुके हैं। इसके अतिरिक्त वर्तमान साहित्यकारों-मार्क ट्वीन, एमिली डिकिन्सन आदि के पत्र भी पुस्तक के रूप में प्रकाशित हो गये हैं। एमिली डिकिन्सन को बचपन से ही पत्र-लेखन के प्रति गहरी दिलचस्पी थी।[3] उसके पत्रों के भी कई खण्ड निकल चुके हैं। इस प्रकार अमेरिका में भी पत्र-साहित्य का भण्डार भरने के लिए बराबर गम्भीर प्रयत्न होते रहे हैं।

I" Compton's Pictured Encyclopedi & Fact-Index",
Vol.- I3, P. I08.
" Beautiful, wity, warmhearted Madam De Sevinge has been called " Queen of letter-writing."

2" Napoleon's Letters" (I965), Translated and Edited by-Thompson, " Price category"
"It has been variously estimated that during his reign as emperor Napoleon wrote 54,000, or 64,000 or 7o,000 letters."

3" The Letters of Emily Dikinson," Vol.-I, Edited by-Thomas H. Johnson. P. I5.
" Letter-writing became a part of Emily Dikinson's life while she was still a child."

पाश्चात्य पत्र-साहित्य के विकास को देखने से प्रतीत होता है कि पूर्व की अपेक्षा पश्चिम के देशों में पत्रों की सुरक्षा, उनके संग्रह और उनके सुव्यवस्थित प्रकाशन के प्रति अधिक सजगता बरती गयी है। पश्चिम की पत्र-लेखन कला में प्रौढ़ता ईसा की पांचवीं शती से ही आ गयी थी। सिसरों, सेनका, प्लिनी आदि के पत्र सफल पत्र-लेखन के अत्यन्त उत्कृष्ट नमूने प्रस्तुत करते हैं। मध्ययुग का पत्र-साहित्य वक्तृता-शास्त्र के व्यापक प्रभाव के कारण रूढ़िग्रस्त हो गया था, परन्तु इस युग की समाप्ति के बाद वह पुनः अपनी क्लासिकल परम्परा से जुड़ गया।

पश्चिम में पत्र-साहित्य का सर्वाधिक विकास अंग्रेजी में हुआ है। इसमें प्रायः सभी प्रसिद्ध कवियों, लेखकों एवं चिन्तकों के पत्र-संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। फ्रांस और अमेरिका में भी पत्र-साहित्य का यथेष्ट विकास हुआ है। इससे प्रकट होता है कि पश्चिम के लोग साहित्य के अन्यरूपों के समान महत्वपूर्ण व्यक्तियों के पत्रों को भी बड़े चाव से पढ़ते हैं। वहां साहित्यकारों के पत्रों की लोकप्रियता उनकी साहित्यिक कृतियों से किसी प्रकार कम नहीं है। डा० जानसन, बायरन, कीट्स आदि के पत्रों का आलोचनात्मक एवं शोधपरक दृष्टि से अध्ययन भी किया गया है।

आगे हम देखेंगे कि पुनर्जागरणकाल में भारत को पश्चिम के अनेक देशों की सांस्कृतिक एवं साहित्यिक परम्पराओं से परिचित होने का अवसर प्राप्त हुआ। भारतीय साहित्य के विभिन्न अंगों के साथ पत्र-लेखन की प्राचीन एवं परम्परागत शैली पर भी पश्चिम का प्रभाव पड़ा। पाश्चात्य पत्र-साहित्य से प्रेरित-प्रभावित होकर हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं में प्रसिद्ध व्यक्तियों के पत्रों को संगृहीत कर प्रकाशित करने की प्रवृत्ति का आरम्भ हुआ। इस प्रकार हिन्दी- पत्र-साहित्य के विकास की पृष्ठभूमि तैयार करने में पाश्चात्य पत्र-साहित्य का योग कम महत्वपूर्ण नहीं है।

हिन्दी पत्र-लेखन की प्राचीन परम्परा :

हिन्दी पत्र-लेखन की प्राचीन परम्परा के संकेत-सूत्र सर्वप्रथम हमें प्राचीन काव्य में उपलब्ध होते हैं । जैसा कि डा० प्रेम प्रकाश गुप्त ने कहा है, "प्राचीनकाल में पद्य की प्रधानता और गद्य की गौणता रही । राजनीति, वैद्यक, ज्योतिष, गणित आदि व्यावहारिक और वैज्ञानिक विषय भी उस समय पद्य में व्यक्त किये जाते थे । यहां तक कि पत्र-व्यवहार में भी पद्य का स्थान था ।"[1] यद्यपि पद्य में लिखे गये प्राचीनकालीन पत्र आज अपने मूलरूप में प्राप्त नहीं होते, किन्तु प्राचीन काव्य में इतिहास-प्रसिद्ध व्यक्तियों के पत्र-व्यवहार के उल्लेखों से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि उस समय पत्र-व्यवहार में भी पद्य का स्थान रहा होगा ।

इस दृष्टि से विचार करने पर सर्वप्रथम आदिकालीन रासो-ग्रंथों की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट होता है । "मेघदूत" और "सन्देशरासक" की सन्देश-परम्परा का निर्वाह रासो-ग्रंथों की महत्वपूर्ण विशेषता है । प्रेम की निश्छल अभिव्यक्ति के कारण राजाओं के वर्णनों पर आधारित होने पर भी इन ग्रंथों में काव्यात्मक सरसता आ गयी है । पत्र-लेखन का स्पष्ट उल्लेख "पृथ्वीराज रासो" के "पद्मावती-समय" नामक सर्ग में मिलता है । इसमें कवि ने पत्र-वाहक के रूप में तोते का उल्लेख करते हुए लिखा है कि वह तोता पत्र लेकर वायु के साथ आकाश में उड़ गया । वह आठ पहर में दिल्ली जा पहुंचा जहां पृथ्वीराज रहते थे ।[2]

१" हिन्दी गद्य का विकास " (१९६६) ,
पृ० ३२ ।

२" पृथ्वीराज रासो के दो अध्याय," अ०
संपा० भारतभूषण सरोज,
पृ० १७८ ।

" ले पत्री सुक यौं चल्यौ उड्यो गगन गहि बाव ।
जंह दिल्ली प्रथिराज बर अट्ठ जाम में जाव ।।"

लोकगीतों में प्रेमिकाओं के पत्रों को उनके प्रेमियों के पास भेजे जाने के लिए अनेक उल्लेख मिलते हैं । जैसे, "खतु लै जा गंगाराम हमारे गौनेको ।" लोक-साहित्य के प्रसिद्ध विद्वान् देवेन्द्र सत्यार्थी ने अपनी पुस्तक "बाजत आवे ढोल" में अनेक भाषाओं के लोकगीत संकलित किये हैं । एक पंजाबी लोकगीत में प्रिय की ओर से प्राप्त पत्र के सम्बन्ध में, प्रिया चांद को सम्बोधित करती हुई कहती है कि -"ढोला का खत आया," मैं इतना रोई, ओ चांद ! मेरे चोले का गरेबान भीग गया ।"[1]

कबीरदास को कभी पत्र लिखने की आवश्यकता ही महसूस नहीं हुई, क्योंकि उनके प्रियतम तो उनके तन-मन-नयन में ही समाये हुए थे ।[2] महाकवि जायसी की नागमती प्रिय को सन्देश भेजते समय जीव-जंतुओं तथा पशु-पक्षियों के प्रति अपनी सहानुभूति भी व्यक्त करती है । संत-शिरोमणि तुलसीदास ने अपने "रामचरित मानस" के राम-विवाह प्रसंग में राजा जनक द्वारा महाराज दशरथ को प्रेषित पत्र का वर्णन करते हुए लिखा है कि दूत ने प्रणाम करके महाराज को पत्र दिया और उन्होंने स्वयं उठकर ग्रहण किया । उस पत्र को पढ़कर महाराज हर्ष से विभोर हो उठे ।[4]

---

१ "बाजत आवे ढोल" (१९५२), पृ० ७८-७९ ।

"खत आयो ढोले दा
इतनी रून्नीयां, चन्ना
गलवां सिज्ज गया चोले दा ।"

२ "कबीर साखी-समीक्षा," पुष्पपालसिंह, पृ० ९० ।

"प्रियतम को पतिया लिखूं जो कहुहोय बिदेस ।
तन में मन में नैन में ताको कहां सन्देश ।।"

३ "जायसी ग्रंथावली" (सं० २०१३ वि०), संपा०रामचन्द्र शुक्ल, पृ०४६ ।

"पिउ सों कहे हु संदेसड़ा, हे भौंरा, हे काग ।
सो धन विरहे जरि मुई, ते हि क धुवां हम्ह लाग ।।"

४ "श्रीरामचरितमानस" (सं० २०११), बालकांड, गीताप्रेस, पृ० २९४ ।

"करि प्रनामु तिन्ह पाती दीन्ही, मुदित महीप आपु उठि लीन्ही ।
बारि बिलोचन बांचत पाती, पुलक गात आई भरि छाती ।।"

गोस्वामी तुलसीदास द्वारा लिखी गयी "विनय-पत्रिका" एक दृष्टि से सेवक द्वारा अपने स्वामी के पास भेजा गया प्रार्थना-पत्र ही है। इसमें कवि ने तत्कालीन दरबारी पद्धति का अनुसरण किया है। अपने आराध्य देव राजा रामचन्द्र के दरबार में यह प्रार्थना-पत्र भेजते हुए कवि ने कहा है - स्वामी, मुझ दीन की यह विनय-पत्रिका आप स्वयं ही पढ़ियेगा। इसको मैंने हृदय में खूब मनन करके लिखा है। आप अपने शरणागत-वत्सल स्वभाव के अनुसार पहले इस पर अपने स्वीकृति सूचक हस्ताक्षर दीजिए और फिर बाद में यदि चाहें तो पंचायत के सदस्यों (सीता, भरत, लक्ष्मण, शत्रुघ्न और हनुमान) से पूछ लीजिएगा।[1] इस प्रकार यह पत्रिका तत्कालीन दरबारी पद्धति पर प्रकाश डालती है।

महाकवि सूरदास के "भ्रमरगीत" में हमें श्रीकृष्ण द्वारा व्रजवासियों तथा गोपियों के पास भेजे गये पत्रों के उल्लेख मिलते हैं जिनमें श्रीकृष्ण के विरह व्यथित हृदय तथा गोपियों के निर्मल प्रेम का सुन्दर चित्र अंकित किया गया है।[2] बाबू वृन्दावनदास के अनुसार विनय-पत्रिका तथा सूर-विनय-पत्रिका पत्र-विधा के ही रूप हैं।[3]

१ "विनय-पत्रिका", संपा० डा० राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी पृ० ५५६

"विनय-पत्रिका" दीन की बापु! आपु ही बाँचौ।
हिये हेरि तुलसी लिखी सो सुभाय सही करि
बहुरि पूँछिये पाँचौ।"

२ "सूर-सारावली" (१९७०), संपा० डा० मनमोहन गौतम, पृ० ९५-९६

(क) "पाती लिखी आप कर मोहन व्रजबासी सब लोग।
माता जसोदा पिता नन्दजू बाढ़ौ विरह वियोग।।"

(ख) "निरखत अंक श्यामसुन्दर को
बारि बारि लावत छाती,
लोचन जल कागद मसि मिली कै
ह्वै गई स्याम स्याम की पाती।"

३ बाबू वृन्दावनदास से से प्राप्त ११-४-१९७७ के पत्र से।

कहते हैं, जब राणा का अत्याचार अपनी पराकाष्ठा पर पहुंच गया, तब राजरानी मीरां ने वेदना-निवेदन तथा आध्यात्मिक मार्गदर्शन के लिए गोस्वामी तुलसीदास जी को एक पत्र लिखा था। सुखपाल नामक विप्र के साथ भेजे गये इस पत्र की चर्चा अनेक ग्रंथों में मिलती है। तुलसीदास पर लिये गये प्राचीन जीवन-चरित ग्रंथ "मूल-गोसाईंचरित" में कहा गया है कि मेवाड़ से सुखपाल नामक एक विप्र मीरांबाई की पत्रिका लेकर आया जिसके उत्तर में तुलसीदास जी ने गीत और कवित्त लिख भेजकर हरि-भजन का सन्देश दिया।[1] तुलसीदास जी के नाम लिखा गया मीरां का वह पत्र इस प्रकार है :-

"श्री तुलसी सुखनिधान दुखहरन गुसाईं।
बार हिं बार प्रनाम करूं अब हरो सोक समुदाई॥
बालापणे से मीरां कीन्हीं गिरधरलाल मिताई।
सो तो अब छूटै नहिं क्योंहू लगी लगन बरियाई॥
मेरे मात-पिता के सम हैं, हरि भगतन सुखदाई।
हमह कहा उचित करिबो है, सो लिखियो समुझाई॥"[2]

इसका एक और पाठ भी मिलता है जिसकी प्रथमपंक्ति है:- "स्वस्ति श्री तुलसी कुल भूषण दूषण हरण गोसाईं।"[3]

---

१ "मूल गोसाईं चरित", दोहा - ३१-३३।

"तब आयो मेवाड़ ते विप्र सुखपाल।
मीरांबाई की पत्रिका लायो प्रेम प्रवाल।
पढ़ि पाती उत्तर लिखे गीत कवित्त बनाय।
सब तजि हरि भजिबो भलो कहि दिय विप्र पठाय।"

(उद्धृत: "तुलसीदास," डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० ४६)

२ (क) "मीरांबाई शब्दावली और जीवन-चरित," बेल बेडियर प्रेस, पृ०४
(ख) "मनोहर पत्र", संपा० सूर्यबली सिंह, पृ० ४१६।

३ "मीरांबाई," डा० प्रभात, पृ० २१५।

विशुद्ध संस्कृत-शैली में लिखा गया यह पत्र हिन्दी के प्राचीन पद्य-पत्र का उत्कृष्ट नमूना है । विद्वानों का कहना है कि तुलसीदासजी ने इस पत्र के उत्तर में " जाके प्रिय न राम वैदेही " वाला प्रसिद्ध पद (गीत) और " सो जननी सो पिता सोई भ्रात " वाला सवैया (कवित्त) लिख भेजा था । श्री रामजीलाल ने इस सम्बन्ध में लिखा है कि -" राघवेन्द्र के पदारबिन्द-मकरन्द में रात-दिन डूबे रहनेवाले महात्मा ने भक्तहृदय की वेदना समझ ली, उन्हें इस बात का तनिक भी ध्यान नहीं था कि यदि उत्तर महाराणा के हाथ में पड़ेगा तो उसका भयानक परिणाम हो सकता है ।"[1] परंतु डा० माताप्रसाद गुप्त ने राजस्थान के प्रसिद्ध इतिहासकार पं० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा के " मीरांबाई की मृत्यु सं० १६०३ तक हो चुकी थी -" इस कथन के आधार पर " मूलगोसाईंचरित " के उस मत का खण्डन किया है कि सं० १६१६ में ही तुलसीदास को मेवाड़ से मीरांबाई द्वारा उक्त पत्र प्राप्त हुआ था ।[2] इस प्रकार इस पत्र की प्रमाणिकता निश्चितरूपेण स्वीकार करने योग्य नहीं प्रतीत होती ।

" बेली क्रिसन रुकमणि री " के रचयिता पृथ्वीराज राठौड़ द्वारा महाराणा प्रताप के नाम लिखे गये पत्र की चर्चा भी अनेक विद्वानों ने की है । कर्नल टाड द्वारा लिखित राजस्थान के इतिहास में भी इस पत्र का उल्लेख मिलता है । राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने इस पत्र के आधार पर एक पत्र-गीति की रचना भी की है ।[3] पृथ्वीराज राठौड़ एक स्वाभिमानी राजपुत और अच्छे कवि थे । बादशाह अकबर ने जब उनको महाराणा प्रताप का संधि-पत्र दिखलाया, तब उन्हें बहुत आश्चर्य हुआ ।

---

१ " राजरानी मीरां के पत्र " (लेख), " मनोहर पत्र " (१९५६)
संपा० सूर्यबली सिंह, पृ० ४१६ ।

२ " तुलसीदास " (१९६५), पृ० ४९ ।

३ " देखिए :" महाराज पृथ्वीराज का पत्र " (महाराना प्रतापसिंह के प्रति)
"पत्रावली " (सं० २०२७ वि०)
पृ० ३-७ ।

उन्होंने उस पत्र को जाली माना और अकबर का आदेश लेकर दरबार के दूत के हाथ अपना एक पत्र महाराणा प्रताप के पास भेजा जिसमें निम्नलिखित दो सोरठिया दोहे थे -

"पातल जो पत साह, बोलै मुख हूंता बयण
मिहर पछम दिस मांह, ऊगै कासप राव वत ।।
पटकूं मूछां पाण, कै पटकूं निज तन करद ।
दीजे लिख दीवाण, इण दो महली बात इक ।।"[1]

इस पत्र के उत्तर में महाराणा प्रताप ने जो पद्य-पत्र लिखा भेजा था, उसका उल्लेख भी अनेक इतिहासकारों ने किया है । इस पत्र-व्यवहार से ज्ञात होता है कि प्राचीनकाल में पद्य में भी सुंदर पत्र लिखकर भेजे जाते थे । पं० मार्तण्ड उपाध्याय ने बिहारी के प्रसिद्ध दोहे "नहि पराग नहि मधुर मधु" को राजा जयसिंह के नाम प्रेषित बिहारी का एक पत्र ही माना है ।[2]

उपर्युक्त उद्धरणों तथा विवेचन से हमें प्राचीन हिन्दी पत्र-लेखन की पद्यमय परम्परा का अच्छा परिचय प्राप्त हो जाता है ।

प्राचीन हिन्दी गद्य-पत्रों की परम्परा हमें अनेक जनपदीय बोलियों में उपलब्ध होती है । इन पत्रों के अध्ययन से पता चलता है कि हिन्दी का प्राचीन गद्य इतना क्षीण-हीन नहीं है जितना कि समझा जाता है । कुछ लोग केवल खड़ी बोली-गद्य को ही महत्वपूर्ण मानकर उसीके विकास में प्राचीन हिन्दी गद्य का विकास देखते हैं, किन्तु यह दृष्टिकोण उचित नहीं है । इस सम्बन्ध में डा० जयकिसन प्रसाद का यह मत उल्लेख्य है कि -

---

१" राठोड़ पृथ्वीराज का महाराणा प्रताप को प्रेषित पत्र" (लेख), अगरचन्द नाहटा, "हिन्दुस्तानी", जनवरी-दिसम्बर १९६४, पृ० ३४१ से उद्धृत ।

२" स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी पत्र-साहित्य" (लेख), "स्वतंत्रता रजत जयंती अभिनन्दन ग्रंथ," संपा० गोपाल प्रसाद व्यास, पृ० ६०२ ।

" हिन्दी गद्य का विकास केवल खड़ी बोली-गद्य का विकास नहीं है, वरन् ब्रजभाषा, राजस्थानी आदि उपभाषाओं का गद्य भी इसके अन्तर्गत आता है ।"[1]

हिन्दी की उपभाषाओं में राजस्थानी-गद्य सर्वाधिक प्राचीन है । डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय ने राजस्थानीगद्य की परम्परा का सूत्रपात दसवीं शताब्दी से माना है ।[2] राजस्थानी में उपलब्ध पत्रों का स्वरूप अधिकांशत: दस्तावेज़ी साहित्य जैसा है । डा० कोतमिरे के मतानुसार हिन्दी साहित्य के वीरगाथा-काल में राजस्थान भारत की संस्कृति एवं साहित्य का केन्द्र होने के कारण यहां प्राचीनतम पत्राभिलेख सुरक्षित हैं ।[3] यह पत्र-सामग्री राजस्थान के सांस्कृतिक-राजनैतिक इतिहास की दृष्टि से अत्यन्त महत्व-पूर्ण है ।

प्राचीनतम हिन्दी-गद्य के रूप में महाराजा पृथ्वीराज और राजा समरसी से सम्बद्ध कुछ आज्ञा-पत्र, हिन्दी की अनेक पुस्तकों में उद्धृत किये गये हैं ।[4] यद्यपि इन पत्रों में पत्र-लेखन की परम्परागत शैली भी दृष्टिगत होती है और इनमें दी गयी तिथियाँ भी "पृथ्वीराज रासो" की तिथि-यों से प्राय: पूर्णत: मिलती हैं, तथापि इनकी भाषा में प्राप्त प्राचीन-अर्वाचीन शब्द-रूपों के कारण पं० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा आदि विद्वानों ने इन पत्रों की प्रामाणिकता में संदेह व्यक्त किया है । राज-स्थानी-गद्य में पत्राभिलेख की प्रामाणिक सामग्री का संकलन कविराजा श्यामलदास कृत "वीर विनोद" शीर्षक ग्रंथ में किया गया है । डा० नारायण सिंह भाटी द्वारा सम्पादित "परम्परा" नामक पत्रिका के चौबीसवें भाग में महाराजा अजीतसिंह, मानसिंह, महाराणा संग्रामसिंह ,

---

१ " हिन्दी साहित्य का आधुनिक काल" (१९६९), पृ० २२५ ।

२ " आधुनिक हिन्दी साहित्य की भूमिका" (१९७१), पृ० २६४ ।

३ " हिन्दी गद्य के विविध साहित्य-रूपों का उद्भव और विकास" (१९५८), पृ० ३ ।

४ देखिए: (क) "भारतेन्दु-पूर्व हिन्दी-गद्य" (१९७४), कांतिकुमार, पृ०७३-७४ ।
(ख) "हिन्दी गद्य का आविर्भाव और विकास", धर्मचन्द संत पृ०६ ।

सवाई जयसिंह, दुर्गादास राठौड़ आदि राजस्थान के अनेक ऐतिहासिक वीर-पुरुषों के पत्र प्रकाशित किये गये हैं । इन पत्रों में सबसे प्राचीन पत्र महाराजा सूरजसिंघ और गजसिंघ के समय का है । इस पत्र पर तिथि सम्वत् १६७१ जेठ वदि ८ है । ये पत्र भारतीय इतिहास की अनेक राजनैतिक घटनाओं पर प्रकाश डालते हैं ।

"शिवाजी की औरंगजेब के दरबार में आगरा की यात्रा (Shivaji's visit to Aurangzeb at Agra) शीर्षक पुस्तक में राजस्थानी में लिखे गये ६८ पत्र संकलित हैं । ये पत्र संवत् १७२२ से १७२४ वि० के बीच की अवधि में लिखे गये हैं । इन पत्रों का सम्पादन डा० जदुनाथ सरकार तथा डा० रघुवीर सिंह ने किया है।) इन पत्रों में आगरे में शिवाजी की बादशाह औरंगजेब के साथ मुलाकात और वहां शाही कैद से उनके भाग निकलने का सुन्दर और सजीव भाषा में वर्णन किया गया है । अधिकतर पत्र आम्बेर के दीवान कल्याणदास को ही सम्बोधित हैं । बालु शाह द्वारा २० मई-१६६६ ई० को लिखे गये एक पत्र का प्रारम्भिक अंश यहां हम उद्धृत करते हैं-

"सिधि श्री सखवोपमां जोगी संग ही श्री कल्याणदास जी जोगी लिषातं वलु केन्य जुहार वांच्य । औठा का समाचार भला छै । थांका सदा भला चाहिज्ये । अपरच राजी सेवाजी का वा पाती साह जी नौ मीलायां का समाचार तपशील वार आगौ लिषी मेज्या था स मालुम हुवा हौसी ।"[1]

लंदन के पुस्तकालयों में स्व० कर्नल टाड के संग्रह में, राजस्थानी में लिखित कुछ पत्र सुरक्षित हैं । इन पत्रों में से कुछ पत्र डा० केसरीनारायण शुक्ल ने "नागरी प्रचारिणी पत्रिका" के "हीरक-जयंती अंक" में कतिपय राजकीय पत्र" शीर्षक से प्रकाशित किये हैं । इन पत्रों में सबसे पुराना पत्र संवत् १६७५ का है । यह पत्र महाराजा सवाई जयसिंह ने महाराणा संग्रामसिंह को लिख भेजा था ।

I." Shivaji's Visit to Aurangzeb at Agra" (1963) P.31

उपर्युक्त राजकीय पत्रों के अतिरिक्त राजस्थानी में लिखे हुए जैन साधु-महात्माओं के पत्र भी प्राप्त होते हैं । इनमें कुछ आदेश-पत्र और कुछ विज्ञप्ति-पत्र हैं । इन पत्रों की भाषा-शैली पर संस्कृत पत्र-लेखन प्रणाली का स्पष्ट प्रभाव देखा जा सकता है । उदाहरण के लिए बीकानेर से पं० लाघाँजी द्वारा सं० १७५३ को जैन भट्टारक जिनचन्द्र सूरि को लिखे गये पत्र की प्रारम्भिक पंक्तियां देखिए-

।। श्री: ।।

।। स्वस्ति श्री फलावधीत: । भ० श्री जिनचन्द्र सूरय: सर्फ-रकश: ।। श्री यथास्थाने सर्व गुणनिधान पंडित प्रवर विद्याविलासगणि योग्यं । - - - - तुहानै ठांणै ६ नो श्री बीकानेर नो आदेश छै --"[1]

जैनों के विज्ञप्ति पत्रों में हमें प्राचीन चित्र-कला के विकास की झलक भी मिलती है । ये पत्र सचित्र होते थे । श्री नगरचन्द नाहटा ने अपने एक लेख[2] में जैसलमेर पाटण, खंभात आदि के जैन ज्ञान-भाण्डारों में १२ वीं शताब्दी से १५ वीं शताब्दी तक के सचित्र पत्रों की विस्तार से जानकारी दी है । इस प्रकार राजस्थानी में प्राचीनकाल से सम्बन्धित प्रचुर पत्र-सामग्री सुरक्षित है ।

ब्रजभाषा में लिखे गये प्राचीन पत्र बहुत कम मिलते हैं । इसमें १६ वीं शती के उत्तरार्द्ध में राधावल्लभ सम्प्रदाय के श्री हितहरिवंश जी द्वारा जूनागढ़ के दीवान श्री विठलदास को लिखी गयी दो "श्रीमुखपत्रियों" की चर्चा कुछ ग्रंथों में मिलती है । एक पत्री का प्रारम्भिक अंश इस प्रकार है -

"श्रीमुख पत्री लिखति । श्री सकल गुण सम्पन्न रसरीति बहावनि चिरंजीव मेरे प्राननि के प्राण बीठलदास ~~जनेस~~ जोग्य लिखित श्री वृन्दावन रजोपसेवी श्रीहरिवंश जोरी सुमिरन बंचनौ । जोरी सुमिरन मत रहौ ।

१" राजस्थानी के कुछ प्राचीन पत्र" (लेख), शिवसिंह चौयल, सम्मेलन पत्रिका", भाग-५२, सं० १-२, पृ० १५० ।

२" देखिए:- "जैन चित्र-कला की एक विशिष्ट उपलब्धि-सचित्र विज्ञप्ति पत्र" (लेख), तुलसी-प्रज्ञा-१, - - - - पृ० २२ ।

जोरी जो है सुख बरखत है । तुम कुसल स्वरूप है । तिहारे हस्ताक्षर बारम्बार आवत है । सुख अमृत स्वरूप है । बाँचत आनन्द उमड़ि चलै है । - - - - "[1]

इस पत्र में प्रयुक्त गद्य के स्वरूप को देखते हुए यह परवर्तीकालीन प्रतीत होता है । इस प्रकार ब्रजभाषा में प्राचीन पत्रों की परम्परा का विकास देखने को नहीं मिलता ।

भोजपुरी, मैथिली आदि पूर्वी हिन्दी की बोलियों का गद्य प्राय: कागज-पत्रों के ही रूप में है ।[2] डा० उदयनारायण तिवारी ने अपने शोध-प्रबन्ध "भोजपुरी भाषा और साहित्य"[3] में संवत् १७८५ के आसपास के कुछ कागज-पत्र उद्धृत किये हैं । इसी प्रकार के कुछ पत्रों की फोटो-प्रतिलिपियां श्री दुर्गाशंकर मिश्र ने अपने "भोजपुरी के कवि और काव्य"[4] शीर्षक ग्रंथ में दी हैं ।

हिन्दी के प्राचीन पत्र-लेखन की परम्परा में सबसे अधिक रोचक एवं आकर्षक पत्र हमें महाराजा छत्रसाल के मिलते हैं । ये पत्र बुन्देली में लिखे गये हैं, किन्तु इनमें खड़ी बोली-गद्य की छटा दिखाई देती है । संवत् १७८३ चैत्र बदि ११ को सवाई जयसिंह के नाम लिखे पत्र का एक अंश यहां उद्धृत किया जाता है :-

श्रीकृस्नोजयति

श्री महाराजाधिराज श्री महाराजा श्री राजा सवाई जैसिंघ जू देव येते श्री महाराजाधिराज श्री महाराजा श्री राजा छत्रसाल जू देव के बाचनै आपर उहाँ के स्माचार भले चाहिजै इहां के स्माचार भले हैं आपर ~~भल~~ पाती आई० हकीकति जानी - - - -[5]

---

१ "भारतेन्दु-पूर्व हिन्दी गद्य" (१९७४), ले० कांतिकुमार, पृ० ७८ से उद्धृत
२ "हिन्दी-गद्य का विकास" (१९६६), डा० प्रेम प्रकाश गुप्त, पृ० १५८ ।
३ "देखिए :- "भोजपुरी भाषा और साहित्य" (१९५४), परिशिष्ट-१ (ख)
४ "देखिए :- "भोजपुरी के कवि और काव्य" (१९५८), अंतिम परिशिष्ट ।
५ "एतिहासिक प्रमाणावली और छत्रसाल" (१९७५), संपा० डा० महेन्द्र-प्रताप सिंह, पृ० ७९ ।

मराठी क्षेत्र से सम्बन्धित हिन्दी में लिखे हुए १८ वीं शती के २०८ पत्र डा० काशिनाथ शंकर केलकर के शोध-प्रबन्ध "१८ वीं० शती के हिन्दी पत्र" के परिशिष्ट -३ में संकलित हैं। इन पत्रों का लेखन-काल सन् १७०६-१८०० ई० है। इन पत्रों में वैयक्तिक पत्रों के अतिरिक्त टीप, सनद, आज्ञा-पत्र, कबज, अर्जदास्त, रुक्का आदि सरकारीपत्र भी पाये जाते हैं। इन पत्रों से स्पष्ट होता है कि हिन्दी उन दिनों आंतरप्रांतीय भाषा थी और इसमें राजकीय पत्र-व्यवहार होता था।

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी को शांतिनिकेतन के विद्यभवन से "पत्र-कौमुदी" के एक हस्तलिखित प्रति प्राप्त हुई है। इसमें पत्र-लेखन के नियमों की सोदाहरण चर्चा की गई है। अन्य भारतीय भाषाओं के साथ इसमें पांच हिन्दी पत्रों के नमूने भी दिये गये हैं।[१] यद्यपि ये कृत्रिम पत्र हैं, फिर भी इनसे इस बात का प्रमाण मिलता है कि उस समय विशुद्ध संस्कृत शैली में पत्र लिखने का ढंग सिखाया जाता था।

ईस्ट इंडिया कम्पनी के प्रारम्भिक शासन काल में नागरी अक्षरों में लिखित लगभग १६० पत्र नेशनल आर्काइव्ज, दिल्ली में सुरक्षित हैं। इनमें से १४५ पत्र डा० धीरेन्द्र वर्मा तथा डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय द्वारा सम्पादित "प्राचीन हिन्दी पत्र-संग्रह" शीर्षक पुस्तक में संकलित हैं। इसमें कम्पनी सरकार के शासकों, देशी नरेशों, नवाबों, ज़मींदारों, कानूनगो आदि के पत्रों के अतिरिक्त सरकारी घोषणाएं, इश्तहार, सनदें, परवाने इक़रारनामे, अदालती बयान आदि कागज-पत्र भी सम्मिलित हैं। यद्यपि इनकी भाषा में किसी एक आदर्श साहित्यिक रूप के दर्शन नहीं होते और लेखक की अपनी क्षेत्रीय भाषा का प्रभाव अनिवार्यरूप से विद्यमान है, तथापि अनेक भाषाओं और बोलियों के मिश्रण के पीछे भी खड़ी बोली का ढांचा स्पष्ट झलकता है। जैसे, "एक घरी दीन चढ़ा था। तब हम दारागा रामलोचन के पाश रोजी के बाशते जो दश तक चीठी ढोते है

---

१ देखिए:- "२०० वर्ष पुराने खड़ी बोली के पत्रों के नमूने" (लेख), "विशाल भारत", अप्रैल १९४०, पृ० २६६-६७।

गए थे । उहा शो अपने घरको चले ।"[1] कुछ पत्रों में उर्दू-शैली की झलक भी मिल जाती है । जैसे, "श्री श्री वडा साहब गरीब प्रवर सलामति सरकार का खैर सलाह मौंदय का वेहतर चाहिये जिस्ते वास्ते हमारा भला होय ।"[2] इस प्रकार इन पत्रों से एक ओर जहां इतिहास की अनेक राज-नैतिक घटनाओं की जानकारी मिलती है, वहां दूसरी ओर उन्नसवीं शताब्दी की देशी-पत्र-लेखन शैली का परिचय भी प्राप्त होता है ।

डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय ने अपने शोध-प्रबन्ध "आधुनिक हिन्दी साहित्य की भूमिका" में फोर्ट विलियम कालेज के पंडितों- श्री लल्लुलाल जी और योगध्यान मिश्र के कुछ पत्र भी उद्धृत किये हैं । इनमें पं० योगध्यान मिश्र ने "प्रेमसागर" के एक नये संस्करण प्रकाशित करने के लिए सरकारी सहायता हेतु जो प्रार्थना-पत्र १ जुलाई सं० १८४१ को लिखा था, वह भाषा के स्वरूप तथा पत्र-लेखन शैली की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है । इसका आरम्भ संस्कृत की परम्परागत शैली के अनुसार हुआ है ।यथा-

"स्वस्ति श्रीयुत फोर्ट उलियम कालेज के नायक सकल गुणनिधान भगवान कपतान श्री मासर्ल साहब के निकट मुज दीन की प्रार्थना - - -"[3]

सन् सत्तावन के क्रांतिकारियों- झांसी की रानी, तांत्या टोपे, राजा मर्दनसिंह, राजा बखतअली आदि से सम्बन्धित कुछ पत्र पं० गौरीशंकर द्विवेदी ने "नया-संसार" में प्रकाशित किये हैं ।[4] इन पत्रों में भी हमें परम्परागत शैली के दर्शन होते हैं और सन् सत्तावन की क्रांति के अनेक अज्ञात सूत्र प्राप्त होते हैं ।

---

१ "प्राचीन हिन्दी पत्र-संग्रह" (१९५९), पृ० ९ ।

२ - वही-, पृ० १८ ।

३ "आधुनिक हिन्दी साहित्य की भूमिका" (१९७१), पृ० ३६४

४ देखिए: "सन् सत्तावन की ऐतिहासिक पत्रावली" (लेख) "नया संसार," गणतंत्र-अंक १९६६, पृ० १२ ।

इस प्रकार हिन्दी पत्र-लेखन की प्राचीन परम्परा के अध्ययन से ज्ञात होता है कि प्राचीन एवं मध्यकाल में मुस्लिम शासन की स्थापना से संस्कृत भाषा और उसके साहित्य की परम्परा अन्य क्षेत्रों में भले ही क्षीण हो गयी हो, परन्तु पत्र-लेखन के क्षेत्र में वह आधुनिक काल के आरम्भ तक पूर्णरूप से सुरक्षित रही है । प्राचीन हिन्दी काव्य में प्राप्त पत्र-लेखन के उल्लेखों तथा प्राचीन कवियों के लोक-विश्रुत पत्र-व्यवहार से हिन्दी-पत्र-लेखन की पद्यमय परम्परा का संकेत मिलता है । हिन्दी-गद्य में पत्र-लेखन की सबसे प्राचीन परम्परा हमें राजस्थानी में उपलब्ध होती है । महाराजा छत्रसाल द्वारा बुंदेली में लिखे गये पत्र अत्यन्त रोचक एवं मधुर हैं । भोजपुरी, मैथिली आदि पूर्वी हिन्दी की बोलियों का गद्य प्राय: कागज-पत्रों के ही रूप में मिलता है । यद्यपि प्राचीनकाल में लिखे गये पत्रों में साहित्यिक चर्चा नहीं मिलती, किन्तु देश के सांस्कृतिक तथा राजनैतिक इतिहास के अध्ययन के लिए इनका बहुत बड़ा महत्व है । हिन्दी भाषा के रूपात्मक विकास की दृष्टि से भी ये पत्र अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं । सारांशत: हिन्दी पत्र-साहित्य के अध्ययन में प्राचीन पत्र-धारा का अपना विशिष्ट स्थान है ।

आधुनिकता, नवजागरण और पत्र-साहित्य :

भारत में आधुनिक सभ्यता का उदय सन् १८५७ के विप्लव के बाद हुआ । हिन्दी प्रदेश में नवजागरण का आरम्भ इसी विप्लव से हो गया था । इससे पहले का अंग्रेजी राज्य कानून और व्यवस्था की अपेक्षा अत्याचार और सैन्य-बल का राज्य अधिक था । देश में आये दिन अंग्रेजी फौज का दमन-चक्र चलता रहता था । अंग्रेजों की इस दमन-नीति के विरुद्ध देश व्यापी विद्रोह के रूप में भयंकर प्रतिक्रिया हुई ।[१] इस प्रतिक्रिया से अंग्रेजों

---

१ अंग्रेजों की दमन-नीति और विद्रोहियों के प्रतिकार के यथार्थ एवं विस्तृत विवरण के लिए देखिए : " गदर के पत्र ", अनु० आचार्य चतुरसेन शास्त्री, कथा - २,३,४, पृ० ५९-९६ ।

की आंखें खुल गयीं और उन्होंने महसूस किया कि भारत पर अपने राज्य को चिर-स्थायी बनाने के लिए भारतीयों के शरीर को ही नहीं, दिल को भी जीतना होगा । विप्लव के बाद सन् १८५८ ई० में नई सरकार की स्थापना हुई । राज्य की बाग-डोर "ईस्ट-इंडिया कम्पनी" के हाथ से निकल कर महारानी विक्टोरिया के हाथ में चली गयी । इसके साथ ही देश में आधुनिकीकरण की प्रक्रिया का नवीनीकरण हुआ यातायात के साधनों में परिवर्तन हुआ, खेलों का विस्तरण हुआ और आधुनिक ढंग की डाकतार व्यवस्था का प्रचलन हुआ ।

यद्यपि अंग्रेजों ने इस देश में नयी अर्थ-व्यवस्था, औद्योगिकता , संचार-सुविधा, डाकसेवा, मुद्रण-व्यवस्था आदि को अपने निजी स्वार्थों के लिए स्थापित किया था, तथापि इससे देश का हित हुआ । एक स्थिर व्यवस्था से छूटकर देश को नूतन गत्यात्मकता का अनुभव हुआ । पाश्चात्य-जगत् के अनेक देशों की राजनैतिक गतिविधियों, सामाजिक रीति-रिवाजों तथा साहित्यिक परम्पराओं से भारतीय शिक्षित वर्ग का सम्पर्क हुआ । पुरानी परम्पराएं धीरे धीरे टूटने लगीं । नये परिवेश में, ऐतिहासिक मांग के फलस्वरूप लोग अपने को नये ढंग से ढालने लगे ।

भारत में ब्रिटिश-साम्राज्य की स्थापना के पश्चात् जहां भारतीय जीवन-पद्धतियों एवं विचारधाराओं में परिवर्तन हुआ, वहां साहित्य के स्वरूप और गठन में भी परिवर्तन हुआ और यह बिलकुल स्वाभाविक भी था । साहित्य की विभिन्न शैलियों एवं उसके विविध रूपों के साथ पत्र-लेखन की प्राचीन या परम्परागत शैली पर भी पाश्चात्य साहित्य का प्रभाव पड़ा । इसकी जटिलता और औपचारिकता धीरे-धीरे घटने लगी । आधुनिक ढंग की डाक-सेवा के कारण अब पत्रों के आदान-प्रदान में मध्यस्थ की आवश्यकता न रही । फलत: पत्र अब आत्मीय वार्तालाप का रूप धारण करने लगा ।

आधुनिक युग में प्रेस की सुविधा से पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन आरम्भ हुआ और समाज के शिक्षित वर्ग में साहित्य के प्रति अभिरूचि बढ़ने लगी । लेखक का सम्पादक के साथ सम्बन्ध स्थापित हुआ और दोनों के

बीच पत्र-व्यवहार भी होने लगा । पाठक भी सम्पादकों के पास पत्र भेजकर सार्वजनिक समस्याओं तथा पत्रिकाओं में प्रकाशित लेखों, निबन्धों आदि पर अपनी प्रतिक्रियाएं व्यक्त करने लगे । इस प्रकार पत्र-लेखन के क्षेत्र में एक नया दौर शुरू हुआ । पहले जहां केवल राजनैतिक, सामाजिक और व्यावसायिक दृष्टियों से ही पत्र लिखे जाते थे, वहां अब साहित्यिक दृष्टि से भी पत्र लिखे जाने लगे । दैनिक, साप्ताहिक, मासिक आदि पत्र-पत्रिकाओं अन्य साहित्य-सामग्री के साथ प्रसिद्ध साहित्यकारों, समाजसेवियों और राजनयिकों के पत्र भी प्रकाशित होने लगे । पाश्चात्य पत्र-साहित्य से प्रेरणा ग्रहण कर, नवजागरण के तीसरे चरण में युगविधायक विभूतियों के वैयक्तिक पत्र पुस्तक के रूप में प्रकाशित भी होने लगे । डा० विश्वनाथ शुक्ल ने लिखा है कि -

" आधुनिकयुग में हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में महत्व-पूर्ण व्यक्तियों के पत्रों को संगृहीत कर प्रकाशित करने की प्रवृत्ति पश्चिम से आई है । पत्रों को साहित्य का अंग मानने और उन्हें साहित्य, संस्कृति, राजनीति, इतिहास और सामाजिक गतिविधियों के मर्म को समझने के एक अमोघ साधन के रूप में ग्रहण करने की प्रेरणा भी हमें पाश्चात्य साहित्य से मिली है ।"[१]

इस प्रकार कतिपय अन्य गद्य-विधाओं, जैसे रेखाचित्र, संस्मरण, इन्टरव्यू, रिपोर्ताज आदि के समान पत्र-साहित्य का एक पृथक् विधा के रूप में विकास आधुनिकयुग में ही हुआ है । पत्र-लेखन के शिल्प और शैली में अनेक प्रयोग भी आधुनिक युग में ही देखने को मिलते हैं । आगे हम देखेंगे आधुनिक युग के कर्णधार और नवजागरण के अग्रदूत भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने पत्र-लेखन के क्षेत्र में कलात्मक प्रयोगों से नवीनता की सृष्टि की है । इस प्रकार पत्र-साहित्य के विकास में भारतीय नवजागरण की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण है ।

१" हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास", चतुर्दशभाग (सं० २०२७ वि०), संपा० डा० हरवंशलाल शर्मा, पृ० ५०८ ।

(आ) हिन्दी में पत्र-साहित्य का विकास

भारतेन्दु द्वारा निर्मित नये चाल के पत्र :

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र हिन्दी-साहित्य की अन्यतम विभूति थे । हिन्दी-साहित्य के इतिहास में आधुनिककाल का आरम्भ "भारतेन्दु-युग" से होता है । "हिन्दी-साहित्य में भारतेन्दु-युग नूतन प्रवृत्तियों, नयी दिशाओं और साहित्य के विभिन्न आयामों की खोज के लिए सदैव स्मरणीय रहेगा तथा इस युग की उपलब्धियों को मूल्यवान समझा जायेगा। भारतेन्दु ने साहित्य की विभिन्न विधाओं में स्वयं रचना की और अन्यों को भी प्रेरणा दी थी ।"[१] हिन्दी-गद्य के लिए नये स्वरूप की स्थापना करने का श्रेय भी उन्हीं को दिया जाता है । उन्होंने नयी विधाओं को अपनाने के साथ हिन्दी को एक नये सांचे में ढाला ।[२] उनकी दीर्घदृष्टि ने हिन्दी का भविष्य आंक लिया था और उसके मार्ग में आनेवाली रुकावटों से वे भली भांति परिचित थे । उनका "निज भाषा उन्नति अहै" वाला पद उनके उद्देश्य को सही माने में अभिव्यक्त करता है । अपना तन, मन, धन सब कुछ दांव पर लगाकर वे अपनी मण्डली के साथ हिन्दी भाषा की श्रीवृद्धि में जुट गये । इस असाधारण कार्य के परिणाम स्वरूप ही हिन्दी में उन्हें आधुनिक युग का प्रवर्तक माना जाता है ।"[३]

१" डा० दयाशंकर शुक्ल : "हिन्दी साहित्य को दत्त द्विजेन्द्र की देन" (१९७८), आमुख, पृ० ३ ।

२" रामचन्द्र तिवारी : "हिन्दी का गद्य-साहित्य" (१९५५), पृ० ३३ ।

"~~हिन्दी-का-गद्य-साहित्य~~

"निश्चय ही भारतेन्दु-युग आते-आते हिन्दी-गद्य में युगान्तर उपस्थित हो गया था और हिन्दी नये चाल में ढलने लगी थी ।"

३" मदन गोपाल : "भारतेन्दु हरिश्चन्द्र" (१९७६), आमुख, पृ० ५ ।

जिस प्रकार हिन्दी साहित्य के अन्य क्षेत्रों में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के द्वारा नवीनता की सृष्टि की है, उसी प्रकार हिन्दी में नये चाल के पत्र भी उन्हों ने ही चलाये ।[1] पत्र-लेखन कला के सम्बन्ध में उन्होंने "प्रशस्ति-संग्रह अथवा पत्र-बोध" नामक एक छोटी-सी पुस्तक लिखी है जो खंगविलास प्रेस से प्रकाशित हुई थी ।[2] यह पुस्तक इस समय अप्राप्य है । इसकी एक टंकित प्रति भारतकला भवन, बनारस में सुरक्षित है । प्रस्तुत पुस्तक के आरम्भ में भारतेन्दु ने प्राचीन पत्र-लेखन शैली पर भी अपने मौलिक विचार व्यक्त किये हैं । प्राचीन पत्र-शैली की समीक्षा के बाद उन्हों ने स्वनिर्मित "नये चाल के पत्र" की विस्तार से जानकारी दी है । अपने नये चाल के पत्रों की कलात्मक विशेषता के सम्बन्ध में उन्हों ने लिखा है :

" हमने अपने पत्रों के लिखने के हेतु सात वार के भिन्न-भिन्न रंग के कागज़ और उनके ऊपर के दोहे आदि बनाये थे । इनमें लाघव यह है कि बिना वार का नाम लिखे ही पढ़नेवाला जान जायेगा कि अमुक वार को पत्र लिखा गया है ।"[3]

---

१ (क) बाबू श्यामसुन्दरदास : "राधाकृष्ण ग्रंथावली" (१९३०), पृ० ४०६ ।

" हिन्दी में कितने ही चाल के पत्र, कितनी ही चाल की नई बातें इन्होंने (भारतेन्दु ने) चलाईं ।"

(ख) प्रो० तारकनाथ अग्रवाल : "भारतेन्दु परिचय" (लेख), "भारतेन्दु-कला" संपा० शिवाधार पाण्डेय, पृ० ९४ ।

" हिन्दी में नये चाल के पत्र इन्होंने चलाये ।"

२ देखिए: "भारतेन्दु हरिश्चन्द्र" (१९६२), ब्रजरत्नदास, परिशिष्ट (ई)में दी गयी भारतेन्दु की रचनाओं की सूची , पृ० ३११ ।

३ भारत कला भवन, बनारस में सुरक्षित "प्रशस्ति-संग्रह " की टंकित प्रति, सं० ४।३८११, पृ० ७ ।

इस प्रकार भारतेन्दु जी सात वार को उसके वर्ण के कागज पर ही पत्र लिखते थे।[1] वे पत्रों के अन्तर्बाह्य रूप में अपनी सहज भावुकता और कलात्मकता का समावेश कर देते थे।

---

१ 'प्रशस्ति-संग्रह', भारत कला भवन, बनारस में सुरक्षित टंकित प्रति, सं० ४।३८१, पृ० ७।

शनि से शुक्र तक के सातों वार के पत्रों के लिए प्रयुक्त भिन्न-भिन्न रंग के कागज तथा उन पर मुद्रित भिन्न-भिन्न शीर्षक क्रमशः इसप्रकार हैं

वार	कागज का रंग	मुद्रित शीर्षक और दोहा
शनि	नीला	श्रीश्यामा श्यामाभ्यांनमः, श्रीकृष्णायनमः और काज शनि लिखन मैं होइ न लेखनि मंद मिलै पत्र उत्तर अवसि यह विनवत हरिचंद ।
रवि	गुलाबी	भक्त कमल दिवाकराय नमः मित्र पत्र बिनु हिय लहत छिनहूं नहिं विश्राम प्रफुलित होत न कमल जिमि रवि उदय ललाम
सोम	सफेद	श्रीकृष्णचन्द्रायनमः, लक्ष्मीमुखचन्द्रायनमः बंधुन के पत्र हि कहत अर्ध मिलन सब कोय आपहु उत्तर देहु तौ पूरो मिलन होय ।।
मंगल	लाल	मंगलमूर्तिर्विजयति, व्रजसार्वभौमायनमः मंलगं भगवान् विष्णु मंगलं गुरुडध्वजनम् मंगलं पुंडरीकाक्षं मंगलायतनं हरिम् ।।
बुध	हरा	विबुधश्रेष्ठायनमः, बुधराधितचरणायनमः बुध जन दर्पण में लखत दृष्ट वस्तु को चित्र । मन अनदेखी वस्तु को यह प्रतिबिम्ब विचित्र ।
गुरु	पीला	गुरवेनमः, गुरुगोविन्दायनमः आशा अमृत पात्र प्रिय विरहाताप हित छत्र । वचन चित्र अवलम्बपद कारज साधक पत्र ।।
शुक्र	श्वेत	कविकीर्तियज्ञसे नमः दूर रखत कर लेत आबरन हरत राखि पास । जानत अंतर भेद जिय पत्र पार्थिक रस रास ।।

नये चाल के पत्रों के साथ लिफ़ाफ़ों के ऊपर पत्र के आशय प्रकट करनेवाले वाक्यों या शब्दों के नये चाल के वेफर भी भारतेन्दु जी ने छपवा रखे थे जिन पर "सलाम," "प्रेम," "कुशल," "शीघ्र," "और कोई न खोले," "गुप्त," "आवश्यक," "शीघ्र उत्तर," आदि शब्द रहा करते थे ।[1]

इससे प्रकट होता है कि हिन्दी-साहित्य में जैसे अन्य क्षेत्रों में भारतेन्दु जी द्वारा नवोन्मेष लाया गया वैसे ही पत्र-लेखन के क्षेत्र में भी उन्होंने नावीन्य प्रदर्शित किया । उन्होंने स्वयं अनेक साहित्यिक पत्र लिखे और अपने सहयोगियों को भी पत्र-लेखन की ओर प्रेरित किया । सम्भवत: इसी कारण डा० शांति खन्ना ने अपने "आधुनिक हिन्दी का जीवनीपरक साहित्य" शीर्षक शोध-प्रबन्ध में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र को "हिन्दी का सर्वप्रथम पत्र-लेखक" माना है,[2] यद्यपि उन्होंने अपने प्रबन्ध में कहीं भी "प्रशस्ति-संग्रह अथवा पत्र-बोध" नामक पुस्तक का उल्लेख नहीं किया है ।

यद्यपि भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और उनके सहयोगी साहित्यकारों ने अनेक पत्र लिखे हैं, किन्तु भारतेन्दु-युग में किसी महत्वपूर्ण व्यक्ति के पत्र, पुस्तक के रूप में प्रकाशित नहीं हुए हैं । इस युग के सामयिकों में प्रसिद्ध व्यक्तियों के पत्र अवश्य प्रकाशित हुए हैं, परन्तु पत्रों के स्वतंत्र संग्रहों का प्रकाशन द्विवेदी-युग में ही आरम्भ हुआ । भारतेन्दु और द्विवेदी-युग के संधिस्थल पर स्थित बाबू बालमुकुन्द गुप्त ने "भारत मित्र" में जो "शिव-शम्भु के चिट्ठे" प्रकाशित किये, वे वैयक्तिक पत्र न होकर खुले पत्र थे । बहुत से आलोचक उन्हें "व्यंग्यात्मक राजनैतिक निबन्ध" अथवा "व्यक्तिपरक-

---

१ "प्रशस्ति-संग्रह," भारत कला भवन, बनारस में सुरक्षित टंकित प्रति, सं० ४ । ३८११, पृ० ८ ।

२ "आधुनिक हिन्दी का जीवनीपरक साहित्य" (१९७३), पृ० ३४१ ।
"हिन्दी साहित्य में सर्वप्रथम पत्र-लेखक भारतेन्दु हरिश्चन्द्र हुए हैं ।

निबन्ध" मानते हैं ।[१] इस प्रकार भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के प्रयास से हिन्दी पत्र-लेखन के क्षेत्र में नवोन्मेश का संचार हुआ और साहित्यकारों तथा अन्य प्रसिद्ध व्यक्तियों के पत्र, दैनिक, साप्ताहिक, मासिक आदि पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होने लगे । आगे चलकर वे पत्र स्वतंत्र संग्रह के रूप में प्रकाशित हुए ।

हिन्दी में महत्वपूर्ण व्यक्तियों के पत्रों को संगृहीत कर पुस्तक के रूप में प्रकाशित करने की प्रवृत्ति का सूत्रपात द्विवेदी-युग में हुआ है । अतः इतिहासकारों ने हिन्दी गद्य-साहित्य की अन्य दो विधाओं-यात्रावृत्त और संस्मरण के साथ पत्र-साहित्य का विधिवत् प्रवर्तन द्विवेदी-युग से माना है ।[२] यहां उल्लेख्य है कि इतिहास-लेखकों ने व्यक्तिगत पत्रों के स्वतंत्र संग्रह को ध्यान में रखकर ही हिन्दी में पत्र-साहित्य का विधिवत् प्रवर्तन स्वीकार किया है । अतएव जिस पत्र-संग्रह के प्रकाशन से हिन्दी में पत्र-साहित्य का विधिवत् सूत्रपात हुआ उस पत्र-संग्रह की यहां पृथक्रूप से चर्चा अपेक्षित है ।

---

१ देखिए :-

(क) श्री कल्याणमल लोढ़ा तथा विष्णुकांत शास्त्री द्वारा सम्पादित "बालमुकुन्द गुप्त : एक मूल्यांकन" शीर्षक पुस्तकमें श्रीकृष्णाचार्य का लेख-" सर्वतोमुखी गुप्तजी," । पृ० १०८ ।

(ख) श्रीवल्लभ शुक्ल कृत " हिन्दी के वैयक्तिक निबन्ध," पृ० ४५ ।

२ " हिन्दी साहित्य का इतिहास " (१९७३),
संपा० डा० नगेन्द्र, पृ० ५२७ ।

" द्विवेदी-युग में नाटक, उपन्यास प्रभृति मुख्य गद्य-विधाओं के अतिरिक्त कुछ अन्य गद्य-रूपों-जीवनी, यात्रावृत्त , संस्मरण और पत्र-साहित्य- के विकास-परिष्कार की ओर भी ध्यान दिया गया । इनमें से अंतिम तीन का तो प्रवर्तन ही इस युग में हुआ ।"

हिन्दी का प्रथम पत्र-संग्रह :

हिन्दी में तथ्याश्रित ललित साहित्य की उपेक्षित विधाओं की ओर आर्य-समाजी लेखकों ने विशेष ध्यान दिया है।[1] हिन्दी में वैयक्तिक पत्र-संग्रहों के प्रकाशन की परम्परा का शुभारम्भ भी आर्य-समाजी लेखकों ने ही किया है। महाशय मुंशीराम जिज्ञासु (स्वामी श्रद्धानन्द) द्वारा सम्पादित "ऋषि दयानन्द का पत्र-व्यवहार" भाग-१ इस परम्परा की प्रथम कड़ी है। यह पत्र-संग्रह सन् १९१० ई० में यंत्रालय गुरुकुल कांगड़ी से प्रकाशित हुआ था।[2] हिन्दी साहित्य के प्रमुख इतिहास-ग्रंथों में भी हिन्दी के प्रथम पत्र-संग्रह के रूप में इसी पुस्तक की चर्चा की गयी है, किन्तु इसके शीर्षक एवं प्रकाशन-वर्ष के सम्बन्ध में निश्चित जानकारी नहीं दी गयी। डा० हरवंशलाल शर्मा द्वारा सम्पादित "हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास" चतुर्दशभाग के खण्ड-६, अध्याय-५ में कहा गया है -

"जब हम पत्र-साहित्य के इतिहास पर दृष्टिप्रक्षेप करते हैं तो हमें ज्ञात होता है कि किसी पत्र-संग्रह को सर्वप्रथम प्रकाशितरूप में लाने का श्रेय स्व० महात्मा मुंशीराम जी (स्वामी श्रद्धानन्द) को है। स्वामीजी ने आज से लगभग ६४ वर्ष पूर्व संभवत: सन् १९०४ में स्वामी दयानन्द सरस्वती संबंधी पत्रों का एक संग्रह प्रकाशित कराया था।"[3]

इसी प्रकार डा० नगेन्द्र द्वारा सम्पादित "हिन्दी साहित्य का इतिहास" में द्विवेदी-युग के गद्य-साहित्य की अन्य विधाओं के विवेचन में उक्त पत्र-संग्रह के सम्बन्ध में ~~सि~~ लिखा गया है :-

---

१ "डा० चन्द्रभानु सोनवणे : "हिन्दी गद्य-साहित्य" (१९७५), पृ० २९२

२ "श्रीमती परोपकारिणी सभा, अजमेर के मंत्री डा० भवानीलाल भारतीय के पुस्तकालय से उपलब्ध प्रस्तुत पत्र-संग्रह के प्रथम संस्करण के आधार पर।

३ "हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास," चतुर्दश भाग, पृ० ५०९-५१० ।

"आलोच्य युग में पत्र-साहित्य-विषयक दो महत्वपूर्ण ग्रंथ प्रकाशित हुए । महात्मा मुन्शीराम ने सन् १९०४ में स्वामी दयानन्द सरस्वती-सम्बन्धी पत्रों का संकलन किया । यह आलोच्य युग का ही नहीं, समूचे हिन्दी-साहित्य में पहला प्रकाशित पत्र-संग्रह है ।"[१]

इन दोनों उद्धरणों को ध्यानपूर्वक पढ़ने से ज्ञात होता है कि एक तो इनमें स्व० महात्मा मुंशीराम द्वारा सम्पादित स्वामी दयानन्द सरस्वती सम्बन्धीपत्रों के संग्रह के शीर्षक का कहीं भी उल्लेख नहीं है । दूसरे, इनमें पत्र-संग्रह के प्रकाशन-वर्ष की निश्चित सूचना नहीं दी गयी है । प्रथम उद्धरण में तो प्रकाशन-वर्ष से पहले "संभवतः" शब्द का प्रयोग किया गया है, किन्तु द्वितीय उद्धरण में ऐसी सम्भावना भी नहीं व्यक्त की गयी । ऐसा प्रतीत होता है कि द्वितीय उद्धरण के लेखक ने प्रथम उद्धरण के लेखक का आधार लेकर और प्रथम उद्धरण के लेखक ने प्रसिद्ध आर्य-समाजी लेखक पं० हरिशंकर शर्मा के निम्नांकित कथन का आधार ग्रहणकर प्रस्तुत पत्र-संग्रह का हिन्दी के सर्वप्रथम पत्र-संग्रह के रूप में उल्लेख कर दिया है -

"जहांतक हमें ज्ञात है, पचासवर्ष पूर्व स्व० महात्मा मुंशीरामजी (श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी) ने सबसे पहले हिन्दी में श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती के सम्बन्ध की चिट्ठियों का एक संग्रह प्रकाशित किया था ।"[२]

इस प्रकार स्व० महात्मा मुंशीराम द्वारा सम्पादित स्वामी दयानन्द सरस्वती सम्बन्धी पत्रों का संग्रह "ऋषि दयानन्द का पत्र व्यवहार" भाग-१ हिन्दी का सर्वप्रथम पत्र-संग्रह है । इस संग्रह में स्वामी दयानंद सरस्वती के लिखे हुए पत्र कम और उनको लिखे हुए पत्र अधिक हैं ।

१" हिन्दी-साहित्य का इतिहास "
(१९७३) , पृ० ५३० ।

२" पद्मसिंह शर्मा के पत्र "
(१९५६)प्राक्कथन, पृ० ९ ।

स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा जिन व्यक्तियों को पत्र लिखे गये हैं उनमें श्री सेवकलाल कृष्णदास (मंत्री-आर्य-समाज, बम्बई), भाई जवाहरसिंह (मंत्री- आर्य-समाज, लाहौर), मनोहरदास खत्री (सम्पादक- "भारत मित्र") आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। श्री सेवकलाल को प्रेषित पत्र से विदित होता है कि भारत में गोरक्षा की ओर सर्वप्रथम ध्यान आकर्षित करनेवाले स्वामी दयानन्द सरस्वती ही थे।[१] भाई जवाहरसिंह को लिखे गये पत्र में स्वामी जी का हिन्दी भाषा के प्रति प्रेम प्रकट होता है[२] तो "भारत मित्र" के सम्पादक के पास भेजे गये पत्र में हमें उनकी वैदिक संस्कृति के प्रति अपार आस्था की झांकी मिलती है।[३] इस प्रकार इन पत्रों से भारतीय नवजागरण की महान् विभूति स्वामी दयानन्द सरस्वती के व्यक्तित्व एवं जीवन-दर्शन का यथार्थ परिचय प्राप्त होता है।

जिन व्यक्तियों ने स्वामीजी के नाम पत्र लिख भेजे हैं, उनमें स्वामी सहजानन्द, पं० सुन्दरलाल, ठाकुर रघुनाथसिंह, सेवकलाल, स्वामी आलाराम, पं० गोपालराव हरि देशमुख, पं० ज्वालादत्त आदि मनीषियों के नाम विशेषरूप से उल्लेख्य हैं। इन पत्रों से स्वामी के विशाल जन-सम्पर्क का पता चलता है और आर्य-समाज की अनेक प्रवृत्तियों के सन्दर्भ-सूत्र उपलब्ध होते हैं। जैसे, पं० सुंदरलाल के पत्र से प्रकट होता है कि सं० १८८२-ई० से पहले ही लाहौर के आर्य-समाज के सामयिक अधिकारी वैदिक यंत्रालय को लाहौर ले जाने के पीछे पड़े हुए थे।[४] श्री सेवकलाल ने अपने पत्र में आर्य-समाज में निष्ठावान कार्यकर्ताओं के अभाव के प्रति खेद व्यक्त किया है।[५] इस प्रकार ये पत्र पुनर्जागरणकाल की अनेक घटनाओं पर प्रकाश डालते हैं।

---

१ "ऋषि दयानन्द का पत्र व्यवहार" भाग-१ (१९१०), पृ० २६८।
२ - वही -, पृ० १२५।
३ - वही -, पृ० ६८।
४ - वही -, पृ० ६५।
५ - वही -, पृ० २४६।

सारांशत: जिन महान् विभूति ने हिन्दी को "आर्य भाषा" घोषित कर उसके प्रचार-प्रसार के लिए अनवरत प्रयत्न किये उन्हीं से सम्बन्धित पत्रों के संग्रह से हिन्दी में पत्र-साहित्य की विधिवत् परम्परा का शुभारम्भ हुआ यह न केवल हिन्दी-पत्रसाहित्य के लिए वरन् समस्त हिन्दी साहित्य के लिए गौरव का विषय है ।

हिन्दी में प्रकाशित अन्य पत्र-संग्रहों का संक्षिप्त परिचय :

स्व० महात्मा मुंशीराम द्वारा सम्पादित उपर्युक्त प्रथम पत्र-संग्रह के कुछ वर्ष बाद आर्य-समाज के प्रसिद्ध विद्वान् पं० भगवद्दत्तजी ने बड़े परिश्रम और प्रयत्न से खोज-खोज कर स्वामी दयानन्द सरस्वती के पत्रों का एक स्वतंत्र संग्रह १९१८ ई० में "ऋषि दयानन्द सरस्वती के पत्र और विज्ञापन" भाग-१ शीर्षक से प्रकाशित कराया । हिन्दी साहित्य के इतिहास-ग्रंथों में इस पत्र-संग्रह को १९०९ ई० में प्रकाशित बताया गया है और इसका शीर्षक "ऋषि दयानन्द का पत्र व्यवहार" दिया गया है ।[१] परन्तु रामलाल कपूर ट्रस्ट, अमृतसर से प्रकाशित इस पत्र-संग्रह के चारों भागों के संयुक्त संस्करण की भूमिका में प्रत्येक संग्रह के प्रकाशन

---

१ (क) "हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास" चतुर्दश भाग (सं० २०२७वि०) संपा० डा० हरवंशलाल शर्मा, पृ० ५१० ।

"कुछ समय बाद संभवत: १९०९ ई० में पं० भगवद्दत्त ने अथक परिश्रम और खोजबीन करके स्वामी दयानन्द सरस्वती के पत्रों का एक विशाल संकलन "ऋषि दयानन्द का पत्र व्यवहार" शीर्षक से सद्धर्म प्रचारक यंत्रालय, गुरुकुल कांगड़ी से प्रकाशित किया ।"

(ख) "हिन्दी साहित्य का इतिहास" (१९७३), संपा० डा० नगेन्द्र पृ० ५३० ।

"तदनन्तर पं० भगवद्दत्त ने पर्याप्त परिश्रम तथा अनुसंधान के बाद "ऋषि दयानन्द का पत्र-व्यवहार" (१९०९) शीर्षक पत्र-संग्रह सम्पादित किया ।"

वर्ष का स्पष्ट उल्लेख किया है ।[1]

पं० भगवद्दत्त जी द्वारा सम्पादित "ऋषि दयानन्द सरस्वती के पत्र और विज्ञापन" भाग-१ में ८२ पत्र और विज्ञापन संकलित हैं । इसमें संस्कृत और अंग्रेजी में लिखे हुए पत्र भी देखने को मिलते हैं । अहमदाबाद के जज गोपालराव हरि देशमुख के नाम लिखे गये संस्कृत-पत्रों में हमें विशुद्ध संस्कृत पत्र-लेखन शैली के दर्शन होते हैं, किन्तु हिन्दी में लिखे गये पत्रों में "स्वस्ति श्री" से आरम्भ होनेवाली परम्परागत शैली नहीं दिखाई पड़ती । १५ जुलाई १८७८ को अपने प्रिय शिष्य प्रसिद्ध क्रांतिकारी नेता श्याम जी कृष्ण वर्मा को लिखा गया पत्र स्वामी जी की स्वदेश भक्ति का उत्कृष्ट उदाहरण है ।[2] इस प्रकार प्रस्तुत संग्रह में स्वामी जी के लिखे हुए पत्र ही संकलित होने के कारण उनके व्यक्तित्व का उद्घाटन पूर्व प्रकाशित पत्र-संग्रह की अपेक्षा अधिक हुआ है ।

इस पत्र-संग्रह के प्रकाशित होने के एक ही वर्ष के पश्चात् इसका द्वितीय भाग प्रकाशित हुआ जिसमें ५५ पत्र और विज्ञापन संकलित हैं । यह पत्र-संग्रह भी स्वामी जी के चिन्तन-मनन एवं उनकी पैनी दृष्टि का परिचय देते हैं ।

पं० भगवद्दत्त जी द्वारा सम्पादित उक्त दो पत्र-संग्रहों के बाद चतुर्वेदी द्वारकाप्रसाद शर्मा ने स्वामी विवेकानन्द के पत्रों का एक छोटा-सा संग्रह "पत्रावली" शीर्षक से प्रकाशित किया । इसी प्रकार सन् १९२२ ई० में बंगाली लेखक सतीशचन्द्र चक्रवर्ती के "स्त्रीरपत्र" का हिन्दी रूपान्तर "पत्रांजलि" शीर्षक से गंगा पुस्तकमाला द्वारा प्रकाशित हुआ । इसी वर्ष एक और उल्लेखनीय पत्र-संग्रह "महात्मा गांधी के निजी पत्र" शीर्षक से

---

१ देखिए: "ऋषि दयानन्द सरस्वती के पत्र और विज्ञापन," द्वि सं० १९५५, रामलाल कपूर ट्रस्ट, अमृतसर, भूमिका, पृ० २ ।

२ "ऋषि दयानन्द सरस्वती के पत्र और विज्ञापन" भाग-१, (१९१८), पत्र-क्रमांक-५४ ।

पं० लक्ष्मीधर वाजपेयी के सम्पादकत्व में प्रकाशित हुआ । इसमें महात्माजी द्वारा आत्मीयजनों को लिखे गये ८१ पत्र संकलित हैं । ये पत्र उस समय के हैं जब दक्षिण आफ्रिका में महात्माजी अहिंसक आंदोलन चला रहे थे । अधिकतर पत्र चिरंजीव मणिलाल को सम्बोधित हैं जिनमें सत्य और अहिंसा के पालन पर बल दिया गया है । [illegible] । हिन्दी में महात्मा गांधी के पत्रों का यह कदाचित् प्रथम प्रकाशित संग्रह है ।

सन् १९२७ ई० में पं० भगवद्दत्त जी ने स्वसम्पादित " ऋषि - दयानन्द सरस्वती के पत्र और विज्ञापन " का तीसरा और चौथा भाग क्रमश: प्रकाशित किया । इन संग्रहों में सम्पादक को अनेक स्थलों से प्राप्त स्वामी जी के अनेक नये पत्र संकलित किये गये हैं । अब ये चारों भाग रामलाल कपूर ट्रस्ट अमृतसर द्वारा प्रकाशित बृहत् संग्रह में सम्मिलित हैं । हिन्दी-पत्रसाहित्य के इतिहास में पं० भगवद्दत्त जी का यह भगीरथ प्रयास सदैव स्मरणीय रहेगा ।

सन् १९२८ से १९३४ के बीच की अवधि में हिन्दी में लिखित कोई महत्वपूर्ण पत्र-संग्रह देखने में नहीं आया । सन् १९३१ में गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित "परमार्थ पत्रावली " भाग-१ में संकलित पत्रों में कहीं भी तिथि-तारीख एवं सम्बोधन-अभिवादन का निर्देश नहीं हैं । अत: इन्हें पत्र न मानकर प्रश्नोत्तर शैली में लिखित "आध्यात्मिक सम्वाद" कहना उपयुक्त होगा । इस काल खण्ड में कुछ ऐसे अनूदित पत्र-संग्रह प्रकाश में आये जिनकी प्रेरणा से लोगों में विविध विषयों के पत्रों को प्रकाशित करने का उत्साह बढ़ा । इन पत्र-संग्रहों में प्रेमचन्द द्वारा अनूदित "पिता के पत्र पुत्री के नाम" (१९३१), शांतिप्रिय आत्माराम द्वारा अनूदित - "आलमगीर के पत्र" (१९३१), आचार्य चतुरसेन शास्त्री द्वारा अनूदित "गदर के पत्र " (१९३४) आदि उल्लेख्य हैं ।

सन् १९३५ में पं० चमूपति द्वारा सम्पादित " ऋषि दयानन्द का पत्र-व्यवहार भाग-२" प्रकाशित हुआ । इसमें स्व० महात्मा मुंशीराम

द्वारा सम्पादित प्रथम भाग से स्वामी जी के पत्र अपेक्षाकृत अधिक संख्या में दिये गये हैं । इस संग्रह की दूसरी विशेषता यह है कि इसमें शाहपुरा के राजाधिराज नाहरसिंह, रावजी बहादुरसिंह, जनरलसर प्रतापसिंह , ठाकुर कृष्णसिंह बारहट, जोधपुर-नरेश जसवन्तसिंह, उदयपुरनरेश सज्जन-सिंह आदि देशी राजाओं के साथ हुआ स्वामी जी का विस्तृत पत्र-व्यवहार संकलित है । इन पत्रों से ज्ञात होता है कि भारत के देशी राजा-ओं में स्वामी जी की कितनी प्रतिष्ठा थी, किस प्रकार प्रत्येक नरेश ऋषि के दर्शन के लिए लालायित रहता था, किस निर्भीकता और नीति-निपुणता से स्वामीजी उनके वैयक्तिक जीवन तथा राज्य-शासन का एक साथ सुधार कर रहे थे । उपर्युक्त राजा-महाराजाओं के अतिरिक्त भारत के प्रसिद्ध विद्वानों - जैसे, पं० मोहनलाल विष्णुलाल पंड्या, कविराजा श्यामलदास, पं० छगनलाल द्विवेदी आदि के साथ हुआ स्वामी जी का पत्र-व्यवहार भी इस पुस्तक में दिया गया है । इसलिए स्वामीजी का बहुमुखी व्यक्तित्व इस पत्र-संग्रह में पूर्व प्रकाशित उनके सभी पत्र-संग्रहों से अधिक स्पष्ट रूप में झलकता है ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सन् १९३५ तक हिन्दी पत्र-साहित्य के भण्डार में स्वामी दयानन्द सरस्वती के पत्र-रत्न ही सर्वत्र अपनी प्रभा विकीर्ण कर रहे थे । पं० चमूपति द्वारा सम्पादित उपर्युक्त पत्र-संग्रह के बाद तीन वर्ष तक हिन्दी में प्रकाशित कोई पत्र-संग्रह उपलब्ध नहीं होता ।

सन् १९३८ में श्री सूर्यबली सिंह के सम्पादकत्व में "मनोहरपत्र" (लव लैटर्स) शीर्षक एक सुन्दर पत्र-संग्रह काशी-पुस्तक भण्डार, बनारस से प्रकाशित हुआ । इसमें संकलित बहुत-से पत्र 'चांद' के पत्रांक में बहुत पहले ही प्रकाशित हो चुके थे । इसमें मौलिक, अनूदित, काल्पनिक, वास्त-विक, औपचारिक, अनौपचारिक आदि अनेक प्रकार के पत्र-संगृहीत हैं । इस संग्रह की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें भारत के अनेक महा-पुरुषों- जैसे, महात्मा गांधी, रवीन्द्रनाथ टैगोर, अरविन्द घोष , सुभाषचन्द्र बोस, बालगंगाधर तिलक, जवाहरलाल नेहरू आदि के पत्र अनेक उनके चित्रों एवं सन्दर्भों के साथ उद्धृत किये गये हैं । पं० देवनारायण -

द्विवेदी, बाबू व्रजरत्नदास आदि विद्वानों के पत्र-लेखन कला-विषयक महत्वपूर्ण लेख भी इसमें संकलित हैं । हिन्दी साहित्य के कुछ इतिहास ग्रंथों[1] में इस पत्र-संग्रह को १९५२ ई० में प्रकाशित बताया गया है, परन्तु इस संग्रह की भूमिका के लेखक पं० कृष्णकान्त मालवीय ने अपने वक्तव्य के अन्त में दिनांक १-११-३८ का स्पष्ट निर्देश दिया है ।[2] यही नहीं, स्वयं सम्पादक ने भी म अपने "कृतज्ञता-प्रकाश" में शिवरात्रि वि० १९९५ का स्पष्ट उल्लेख किया है । अत: इस महत्वपूर्ण पत्र-संग्रह को स्वातंत्र्य-पूर्व हिन्दी-पत्र-साहित्य की उपलब्धि मानना ही उपयुक्त होगा ।

"मनोहर पत्र" के बाद लगभग दो वर्ष तक हिन्दी में पत्र-संग्रह के प्रकाशन की प्रवृत्ति स्थगित रही । सन् १९४० से १९४४ के बीच कुछ ऐसी पुस्तकें प्रकाशित हुईं जिनमें दिये गये पत्र बाह्यत: पत्र होते हुए भी वास्तव में साहित्यिक कृति के रूप में लिखे और प्रकाशित किये गये हैं । इस प्रकार की पुस्तकों में श्री भदंतानन्द कौशल्यायन कृत "भिक्षु के पत्र" (१९४०), डा० धीरेन्द्र वर्माकृत "योरप के पत्र" (सं० २००० वि०) और रामनाथ "सुमन" कृत "भाई के पत्र" (१९४४) विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं ।

छात्र हितकारी पुस्तकमाला से प्रकाशित "भिक्षु के पत्र" शीर्षक पुस्तक में १८ पत्र मुद्रित हैं । ये सभी पत्र "योगेन्द्र" नामक व्यक्ति को सम्बोधित हैं । डा० नगेन्द्र ने "संस्कृति, साहित्य और भाषा" शीर्षक एक अधुनातन पत्र-संग्रह की भूमिका में श्री भदन्तानन्द कौशल्यायन की ~~इस कृति का व्यक्तिगत पत्रों के स्वतंत्र संकलन के रूप में उल्लेख किया है~~

---

१ देखिए: (क) "हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास," चतुर्दश भाग, पृ० ५११ ।
(ख) "हिन्दी साहित्य का इतिहास" (१९७३), संपा० डा० नगेन्द्र, पृ० ७२२ ।

२ "मनोहर पत्र" (१९५६), भूमिका (थ) ।

३ "वही-, "कृतज्ञता-प्रकाश," । पृ० २ ।

इस कृति का व्यक्तिगत पत्रों के स्वतंत्र संकलन के रूप में उल्लेख किया है ।[1] परन्तु लेखक श्री कौशल्यायन जी ने पुस्तक की भूमिका में पहले ही यह स्पष्ट कर दिया है कि "यह योगेन्द्र कोई व्यक्ति-विशेष न होकर उन सब परिचितों तथा अपरिचितों के प्रतिनिधि हैं जिनकी बुद्ध-धर्म-सम्बन्धी लिखित वा मौखिक जिज्ञासाएं ही इन पत्रों के लिखे जाने का कारण हुई हैं ।"[2] इससे स्पष्ट है लेखक का मुख्य उद्देश्य बौद्ध-धर्म के सिद्धान्तों का स्पष्टीकरण है । इसके अंतिम पत्र- " मैं भिक्षु क्यों बना ? " - को छोड़ कर कहीं लेखक ने अपने व्यक्तिगत जीवन की चर्चा नहीं की है । अत: हमारे विचारों में इसे व्यक्तिगत पत्रों का स्वतंत्र संग्रह न मानकर आध्यात्मिक या उपदेश प्रधान पत्रात्मक निबन्धों का संग्रह मानना अधिक समीचीन जान पड़ता है ।

" योरप के पत्र " शीर्षक पुस्तक में डा० धीरेन्द्र वर्मा ने पत्रों के रूप में अपनी योरप-यात्रा का विवरण प्रस्तुत किया है । इसमें मुद्रित बहुत से पत्र पहले "सुधा " में छप चुके थे ।[3] यद्यपि लेखक ने पुस्तक के "परिचय" में यह बात स्वीकार नहीं की कि ये पत्र, पत्र की शैली में लिखी साहित्यिक रचनाएं हैं,[4] किन्तु प्रकाशित पत्रों से यही प्रकट होता है यह

---

१ " संस्कृति, साहित्य और भाषा" (१९७९), " संपा० डा० त्रिलोकीनाथ व्रजबाल और अन्य, भूमिका, पृ० १ ।

" सन् १९४० ई० में श्री भदन्त आनन्द कौशल्यायनका पत्र-साहित्य "भिक्षु के पत्र "शीर्षक से प्रकाशित हुआ था । यह व्यक्तिगत पत्रों के स्वतंत्र संकलन के रूप में था ।"

२ " भिक्षु के पत्र " (१९४०), "पत्रपरिचय " ।

३ " देखिए:- " पेरिस से पहला विस्तृत पत्र ," सुधा , मार्गशीर्ष , ३१४, वर्ष-१०, खण्ड-१, सं० ५ ।

४ " योरप के पत्र " (सं० २००० वि०), "परिचय", पृ० ३ ।

पत्रात्मक यात्रा-वर्णन की पुस्तक है । पत्रों में तिथि-तारीख और स्थल का निर्देश तो है, परन्तु सम्बोधन, अभिवादन, परिचय, हस्ताक्षर आदि का संकेत नहीं है । डा० सुरेन्द्र माथुर ने भी अपने "यात्रा-साहित्य:- उद्भव और विकास" शीर्षक शोध-प्रबन्ध में प्रस्तुत पुस्तक की विवेचना "पत्र-शैली में लिखे गये यात्रा-साहित्य" के अन्तर्गत की है ।[१] इस प्रकार इसे व्यक्तिगत पत्रों का स्वतंत्र संकलन नहीं कहा जा सकता ।

रामनाथ "सुमन" लिखित "भाई के पत्र" शीर्षक पुस्तक में "भगवती" बहन के नाम एक भाई के पत्र प्रकाशित हैं । इसमें पत्रों के माध्यम से विवाह-समस्या, स्त्री-जीवन और मातृत्व पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है । विवेचन की सुविधा की दृष्टि से पुस्तक के मुख्य विषय को तीन खण्डों - कन्या, नारी और माता - में विभक्त किया गया है । खण्ड-४ में कुछ सच्चे पत्र भी दिये गये हैं, किन्तु इन दो-चार पत्रों से इसे व्यक्तिगत पत्रों का संग्रह मान लेना ठीक न होगा ।

सन् १९४५ से १९४९ के बीच "कमला के पत्र" (१९४६) अनु० एक अभागा ग्रेज्युएट, "रूसी की चिट्ठी" (१९४७) अनु० धन्यकुमार जैन, "मित्र के नाम पत्र" (१९४७) अनु० सुरेशचन्द्र शर्मा आदि कुछ अनूदित पत्र-संग्रहों को छोड़कर कोई उल्लेख्य पत्र-संग्रह प्रकाश में नहीं आया ।

सन् १९५० में सत्याश्रम वर्धा से "अनमोल पत्र" शीर्षक एक छोटा-सा पत्र-संग्रह प्रकाशित हुआ जिसमें स्वामी सत्य भक्त द्वारा लिखे गये पत्रों के महत्वपूर्ण अंश संकलित किये गये हैं । इसमें कुल मिलाकर ३८ पत्रों के महत्वपूर्ण अंश प्रकाशित हैं । अधिकतर पत्रों के अंश स्वामी जी के अनुयायियों से सम्बन्धित हैं, किन्तु इसमें महात्मा गांधी के नाम प्रेषित कुछ पत्रों के अंश भी दिये गये हैं । इन पत्रांशों में स्वामी जी की चिन्तनशीलता, सत्यप्रियता और निर्भीकता का सुन्दर परिचय मिलता है । इसी वर्ष से नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद की ओर से "बापू के पत्र" शीर्षक गांधीजी के पत्रों की पुस्तकमाला का आरम्भ हुआ और

---

१ "यात्रा-साहित्य : उद्भव और विकास"
(१९६२), पृ० ३१७ ।

"बापू के पत्र आश्रम की बहनों के नाम" (१९५०), "बापू के पत्र मीरां के नाम" (१९५१) आदि पत्र-संग्रह समय-समय पर प्रकाशित होते रहे। सन् १९५१ में श्रीरामजीलाल बधौतिया ने "उपमन्यु के पत्र" शीर्षक एक पुस्तक विनोद पुस्तक मंदिर,, आगरा से प्रकाशित कराई जिसमें पत्रों के रूप में छात्रोपयोगी निबन्ध दिये गये हैं।

सन् १९५२ में श्री बेढ़ब बनारसी की एक पुस्तक "महत्व के गुमनाम पत्र" शीर्षक से लोकसेवा प्रकाशन, बनारस द्वारा प्रकाशित हुई। इसमें देश के विभिन्न क्षेत्रों के प्रसिद्ध व्यक्तियों को सम्बोधित कर उन क्षेत्रों से सम्बद्ध विसंगतियों पर व्यंग्य किया गया है। इसमें महात्मा गांधी, मौलाना आजाद, विजयालक्ष्मी पंडित आदि देश के बड़े-बड़े नेताओं के अतिरिक्त बनारस के कोतवाल, विश्वविद्यालय के प्रोफेसर आदि के नाम पत्र लिखे गये हैं। इस प्रकार ये पत्र खुले पत्रों की श्रेणी के अन्तर्गत आते हैं। इसी वर्ष श्री महादेव साहा ने "शरत् पत्रावली" शीर्षक से शरदबाबू के पत्रों का संग्रह तथा श्री नारायण स्वामी ने "राम-पत्र" शीर्षक से स्वामी रामतीर्थ के पत्रों का संग्रह प्रकाशित किया। सन् १९५३ में छायावाद की सुप्रसिद्ध कवयित्री महादेवी वर्मा के सम्बन्ध में विश्वम्भर "मानव" को लिखे गये शिवचन्द्र नागर के पत्र "महादेवी: विचार और व्यक्तित्व" शीर्षक से पुस्तकाकार प्रकाशित हुए। इसमें पत्रों के रूप में महादेवी जी के व्यक्तित्व के विविध पहलुओं पर प्रकाश डाला गया है। एक दृष्टि से यह पत्रात्मक समीक्षा ही है। मानवजी इसे पत्र-साहित्य का अंग मानते हैं।[१]

हिन्दी पत्र-साहित्य के इतिहास में सन् १९५४ ई० विशेषरूप से उल्लेखनीय है। हिन्दी साहित्यकारों के व्यक्तिगत पत्रों के स्वतंत्र संग्रहों के प्रकाशन की परम्परा का आरम्भ इसी वर्ष में हुआ। श्री बैजनाथसिंह "विनोद" द्वारा सम्पादित "द्विवदी पत्रावली" इस परम्परा की प्रथम कड़ी है। इसमें आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी द्वारा पं० श्रीधर पाठक, बाबू राधाकृष्णदास, पं० पद्मसिंह शर्मा, मैथिलीशरण गुप्त, पं० लल्ली-प्रसाद पाण्डेय आदि साहित्यकारों को लिखे गये १८४ पत्र संकलित हैं। जैसा कि डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय ने कहा है, "इन पत्रों से बीसवीं शताब्दी के हिन्दी साहित्य के प्रथम पैंतीस-छत्तीस वर्षों की बड़ी सुन्दर

१- श्री विश्वम्भर "मानव" से हुई प्रत्यक्ष भेंट के आधार पर।

झांकी मिलती है ।[1] इस प्रकार हिन्दी साहित्यकारों के व्यक्तिगत पत्रों का पुस्तकाकार प्रकाशन आचार्य द्विवेदी की इस पत्रावली से प्रारम्भ हुआ, इसलिए इस पत्र-संग्रह का साहित्यिक दृष्टि से बहुत बड़ा महत्व है ।

सन् १९५५ में यात्रा-विषयक पत्रों की दो पुस्तकें प्राप्त होती हैं - एक श्रीमती विमला कपूर द्वारा लिखित "अजाने देशों में" और दूसरी डा० भगवतशरण उपाध्याय लिखित "कलकत्ता से पेकिंग" । प्रथम पुस्तक में श्रीमती कपूर की योरप-यात्रा का वर्णन है और दूसरी में डा० उपाध्याय की पेकिंग-यात्रा का विद्वानों ने इन पुस्तकों की चर्चा पत्र-शैली में लिखित यात्रा-साहित्य में की है ।[2]

सन् १९५६ में पं० बनारसीदास चतुर्वेदी तथा हरिशंकर शर्मा की सम्पादकता में प्रकाशित "पद्मसिंह शर्मा" के पत्र "शीर्षक पत्र-संग्रह अपने आकार-प्रकार, प्राक्कथन-भूमिका, पत्रों के क्रम, आदि कई दृष्टियों में महत्वपूर्ण है । "पत्र-लेखन कला" शीर्षक भूमिका में देश-विदेश के महान् पत्र-लेखकों के पत्र, ब्लाक-सहित मुद्रित हैं । प्रस्तुत संग्रह में पं० शर्मा जी के ३२ हिन्दी साहित्यकारों के नाम प्रेषित २६८ पत्र संकलित हैं । जिन साहित्यकारों के नाम पत्र लिखे गये हैं, उनमें सर्वश्री पारसनाथसिंह, वियोगी हरि, हरिशंकर शर्मा, बनारसीदास चतुर्वेदी, श्री राम शर्मा, हरिदत्त-शास्त्री, ज्वालादत्त शर्मा, जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी, भीमसेन शर्मा, नाथूराम शंकर शर्मा आदि के नाम उल्लेख्य हैं । इन पत्रों को पढ़ने से ज्ञात होता है कि पं० पद्मसिंह शर्मा केवल धुरंधर विद्वान् ही नहीं थे, वरन् उनमें व्यावहारिक सूझ-बूझ, साहस, निर्भीकता, विचारों की दृढ़ता, स्पष्टवादिता आदि अनेक उच्च कोटि के गुण भी विद्यमान थे । भाषा, व्याकरण, रचनादर्श और साहित्यिक मूल्य की दृष्टि से भी ये पत्र अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं ।

सन् १९५८ में श्री बैजनाथसिंह "विनोद" द्वारा सम्पादित "द्विवेदीयुग के साहित्यकारों के कुछ पत्र" और पं० किशोरीदास वाजपेयी द्वारा सम्पादित "साहित्यकों के पत्र" शीर्षक दो उल्लेखनीय पत्र-संग्रह प्रकाशित हुए ।

१" आलोचना", जनवरी, १९५५, पृ० १२६ ।

२" देखिए-" यात्रा-साहित्य का उद्भव और विकास" (१९६२), डा० सुरेन्द्र माथुर, पृ० ३१७ ।

" द्विवेदी-युग के साहित्यकारों के कुछ पत्र " शीर्षक पत्र-संग्रह श्री "विनोद" की सम्पादन-कला का उत्तम नमूना है । इसमें आचार्य - महावीरप्रसाद द्विवेदी और पं० पद्मसिंह शर्मा के पत्रों के अतिरिक्त पं० श्रीधर पाठक, पं० बालकृष्ण भट्ट, बाबू बालमुकुन्द गुप्त और आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के महत्वपूर्ण पत्र संकलित हैं । पत्रों का लेखन-काल १९०३ ई० से प्रारम्भ होता है । इस पत्र-संग्रह के विषय में हिन्दुस्तानी एकेडेमी के तत्कालीन मंत्री डा० धीरेन्द्र वर्मा ने बहुत उपयुक्त कहा है- " आचार्य द्विवेदी जी तथा उनके समकालीन लेखकों के व्यक्तित्व का परिचय साधारणतया हमें उनकी रचनाओं के द्वारा प्राप्त होता है । किन्तु यह परिचय अधूरा है । उनके वैयक्तिक पत्र इस अधूरी जानकारी को पूरा करते हैं ।"[१] इस प्रकार यह पत्र-संग्रह द्विवेदी-युग के साहित्यकारों के वास्तविक व्यक्तित्व का परिचायक है ।

पं० किशोरीदास वाजपेयी द्वारा सम्पादित "साहित्यिकों के पत्र" एक छोटा-सा संग्रह होते हुए भी हिन्दी पत्र-साहित्य में अपना विशिष्ट स्थान रखता है । इस संग्रह की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, अयोध्यासिंह उपाध्याय, मिश्रबन्धु, डा० अमरनाथ झा, रामदास गौड़, आचार्य अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी आदि हिन्दी के २४ महान् साहित्यिकों के पत्र उनके ब्लाक सहित मुद्रित हैं । पत्रों के साथ सम्पादक ने सम्बन्धित पत्र-लेखक के व्यक्तित्व-कृतित्व पर किंचित् प्रकाश डालते हुए हिन्दी-साहित्य की अनेक रोचक घटनाओं का उल्लेख भी किया है । इस प्रकार यह संग्रह हिन्दी पत्र-साहित्य में अपने ढंग का अकेला पत्र-संग्रह है ।

१९५८ ई० में प्रकाशित उपर्युक्त दो महत्वपूर्ण साहित्यिक पत्र-संग्रहों के अतिरिक्त राजनैतिक दृष्टि से उपयोगी दो पत्र-संग्रह भी प्रकाशित हुए हैं । ये दोनों ही पत्र-संग्रह स्वतंत्रता- संग्राम के सेनानी और प्रसिद्ध गांधीवादी समाज-सेवक सेठ जमनालाल बजाज से सम्बन्धित हैं । जिस प्रकार नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद की ओर से

---

१ " द्विवेदी-युग के साहित्यकारों के कुछ पत्र " (१९५८), "प्रकाशकीय " से उद्धृत ।

'बापू के पत्र' शीर्षक पुस्तक-माला प्रकाशित हुई है, उसी प्रकार सस्ता साहित्य मंडल, दिल्ली की ओर से सेठ जमनालाल बजाज सम्बन्धी पत्र 'पत्र व्यवहार' शीर्षक से कई खण्डों में प्रकाशित हुए हैं। इन सभी खण्डों का सम्पादन सेठ जी के सुपुत्र श्री रामकृष्ण बजाज ने किया है। सन् १९५८ में प्रकाशित इस पुस्तक-माला के प्रथम दो खण्डों में क्रमश: सेठ जमनालाल बजाज का देश के राजनैतिक नेताओं तथा देशी रियासतों के कार्यकर्ताओं से हुआ पत्र-व्यवहार संकलित है। ये दोनों ही पत्र-संग्रह भारत के स्वाधीनता-संग्राम के अनेक तथ्यों को उद्घाटित करते हैं और सेठ जी की कार्यकुशलता, कर्तव्यनिष्ठा, सेवा-भावना, त्याग-वृत्ति आदि चारित्रिक विशेषताओं का परिचय देते हैं।

हिन्दी पत्र-लेखन की प्राचीन परम्परा के विश्लेषण में डा०-धीरेन्द्र वर्मा तथा डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय द्वारा सम्पादित ईस्ट - इन्डिया कम्पनी के प्रारम्भिक शासन से सम्बद्ध जिस 'प्राचीन पत्र-संग्रह' की चर्चा हम कर चुके हैं, वह सन् १९५९ में इलाहाबाद विश्वविद्यालय से प्रकाशित हुआ है। इस संग्रह के पत्रों का लेखन-काल वि०सं० १८४९-१८७१ (सन् १७९३ - १८२० ई०) है। इस प्रकार इन पत्रों में एक ओर जहां भारतीय राजाओं और नवाबों की राजनैतिक सत्ता के विघटन तथा अंग्रेजी राज्य-सत्ता के विस्तार से सम्बन्धित घटनाओं के सूत्र प्राप्त होते हैं, वहां दूसरी ओर १८ वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तथा १९ वीं शताब्दी के प्रथम चरण के हिन्दी-गद्य के स्वरूप की झांकी मिलती है।

सन् १९६० में पं० वियोगी हरि द्वारा सम्पादित एक छोटा-सा किन्तु अत्यन्त महत्वपूर्ण पत्र-संग्रह 'बड़ों के प्रेरणादायक कुछ पत्र' शीर्षक से प्रकाशित हुआ। इसमें छह बड़े व्यक्तियों-महात्मा गांधी, महादेव - देसाई, किशोरलाल मशरूवाला, ठक्कर बापा, विनोबा भावे और राजर्षि टंडन - के प्रेरणादायक पत्र संकलित हैं। सम्पादक ने हर पत्र से पहले उसकी पृष्ठभूमि का संस्मरणात्मक शैली में सुन्दर विवरण प्रस्तुत किया है जिससे पत्रों को पढ़ते समय एक रोचक कहानी-सा आनन्द मिलता है। 'पत्र व्यवहार' का तीसरा भाग भी इसी सन् में प्रकाशित हुआ है जिसमें सेठ जमनालाल बजाज का रचनात्मक कार्यकर्ताओं के साथ हुआ पत्र-व्यवहार

संगृहीत है ।

सन् १९६२ में प्रकाशित प्रमुख पत्र-संग्रहों के नाम हैं- श्री अमृतराय और मदन गोपाल द्वारा सम्पादित "चिट्ठी-पत्री" भाग १-२, पं० - कमलापति त्रिपाठी लिखित "बन्दी की चेतना" (द्वि.सं.), और श्री रामकृष्ण बजाज द्वारा सम्पादित "विनोबा के पत्र"। "चिट्ठी-पत्री" भाग-१ में प्रेमचन्द जी के १८१ पत्र संकलित हैं । ये सभी पत्र उर्दू के प्रसिद्ध समाचार-पत्र 'जमाना' के सम्पादक मुंशी दयानारायण निगम के नाम लिखे गये हैं । इन पत्रों में हमें प्रेमचन्द जी के साहित्यिक जीवन के प्रारम्भिक वर्षों की झांकी मिलती है और निगम साहब से उनकी प्रगाढ़ मैत्री का परिचय प्राप्त होता है । "चिट्ठी-पत्री" भाग-२ में प्रेमचन्द जी द्वारा विभिन्न साहित्यकारों को लिखे गये पत्रों के साथ उनको प्राप्त हुए कुछ पत्र भी संकलित हैं । इसमें कुल मिलाकर २८३ पत्र प्रकाशित हैं । जिन साहित्यकारों के साथ प्रेमचन्दजी का पत्र-व्यवहार हुआ है उनमें जैनेन्द्रकुमार और बनारसीदास चतुर्वेदी के नाम विशेषरूप से उल्लेखनीय हैं । इस पत्र-व्यवहार में राजनैतिक और साहित्यिक क्षेत्र की अनेक महत्वपूर्ण घटनाओं के सन्दर्भ प्राप्त होते हैं । इसके अतिरिक्त प्रेमचन्द जी द्वारा श्रीराम शर्मा, शिवपूजन सहाय, उपेन्द्रनाथ अश्क, विष्णु प्रभाकर आदि साहित्यकारों को लिखे गये पत्र भी साहित्यिक दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं । "बन्दी की चेतना" शीर्षक पुस्तक में पं० कमलापति त्रिपाठी द्वारा अने उनके आत्मज श्री लोकपति त्रिपाठी (लल्लू) को लिखे गये १९ पत्र प्रकाशित हैं । ये सभी पत्र पं० त्रिपाठी जी ने १९४२ ई० की महान् क्रांति के दौरान नैनी जेल में बन्दी की हैसियत से लिखे थे । पत्र अत्यन्त लम्बे और चिन्तनपूर्ण हैं । श्री रामकृष्ण बजाज द्वारा सम्पादित "विनोबा के पत्र" के प्रथम खण्ड में बजाज परिवार के नाम लिखे गये विनोबा जी के विचारोत्तेजक पत्र संकलित हैं । ये पत्र आचार्य विनोबा के साधक व्यक्तित्व को उजागर करते हैं ।

सन् १९६३ में प्रकाशित पत्र-संग्रहों में आचार्य काका कालेलकर द्वारा सम्पादित "बापू के पत्र"; बजाज-परिवार के नाम;

" [redacted] ", रामकृष्ण बजाज द्वारा सम्पादित "पत्र व्यवहार" भाग-४ तथा श्रीमती कौशल्या अश्क लिखित "रेली रंगे पत्र" उल्लेख्य हैं । 'बापू के पत्र ' शीर्षक संग्रह में महात्मा गांधी द्वारा बजाज-परिवार के नाम लिखे गये ३९२ पत्र संकलित हैं । इन पत्रों से एक ओर जहां बजाज-परिवार के प्रति बापू के अपार स्नेह एवं ममत्व की झलक मिलती है, वहां दूसरी ओर अनेक सामाजिक-राजनैतिक प्रसंगों की स्मृति भी मानस-पट पर अंकित हो उठती हैं ।" पत्र व्यवहार" भाग-४ में सेठ जमनालाल बजाज का अपनी पत्नी जानकीदेवी बजाज के साथ हुआ पत्र-व्यवहार संकलित है । ये पत्र एक आदर्श भारतीय दम्पती का सुन्दर चित्र हमारे सम्मुख प्रस्तुत करते हैं ।" रेली रंगे पत्र" में चीन के भारत पर आक्रमण के समय देश के सैनिकों के नाम लिखे गये तथा उनकी ओर से पाये गये पत्र प्रकाशित हैं । ये सभी पत्र काल्पनिक ही हैं, परन्तु जैसा कि लेखिका ने सूचित किया है, उन्हें पत्र लिखनेवाला सतीश तथा अमृतेश को पत्र लिखने वाली तोषी काल्पनिक पात्र नहीं हैं । लेखिका के साथ उनका घनिष्ठ सम्बन्ध हैं । सतीश उनके मौसेरे भाई हैं और तोषी उनकी चचेरी बहन हैं ।[१] इसी कारण इन पत्रों में हमें आत्मीयता का पुट मिलता है ।

सन् १९६४ से १९६९ के बीच की अवधि में प्रकाशित कुछ महत्वपूर्ण पत्र-संग्रहों के नाम हैं - 'पत्र-व्यवहार' भाग-५ (१९६४), डा० जगदीश-चन्द्र जैन लिखित "सोवियत रूस पिता के पत्रों में"(१९६६),"पत्र-व्यवहार" भाग-६ (१९६८), हरिशंकर परसाई लिखित "और अंत में" (१९६८) और "पत्र व्यवहार" भाग-८ (१९६९) ।" पत्र व्यवहार " के पांचवें भाग में जमनालाल बजाज का अपने परिवार के साथ हुआ विस्तृत पत्र-व्यवहार संकलित है ।" सोवियत रूस पिता के पत्रों में "शीर्षक पुस्तक में लेखक ने पत्रों के माध्यम से अपनी रूस-यात्रा का मनोरम वर्णन प्रस्तुत किया है । वस्तुत: यह यात्रा-वृत्त की पुस्तक है ।" पत्र व्यवहार के छठे भाग में सेठ जी का राज्याधिकारियों से हुआ पत्र व्यवहार संकलित है ।" पत्र व्यवहार" पुस्तक-माला में यह सबसे बृहद् पत्र-संग्रह है ।" और अंत में" शीर्षक पुस्तक में परसाई जी के ३४ व्यंग्यात्मक पत्र प्रकाशित हैं जो उन्हों ने 'कल्पना' के सम्पादक के नाम लिखे थे । 'पत्र व्यवहार' के आठवें और अंतिम भागमें

---

१ शोधकर्ता को प्राप्त कौशल्या अश्क के एक व्यक्तिगत पत्र से ।

सेठ जी का राजनैतिक व्यक्तियों तथा समाज-सेवियों के साथ हुआ पत्र-व्यवहार प्रकाशित हैं ।

सन् १९७० में "उग्र" जी ने "फाइल और प्रोफाइल", बच्चनजी ने "बच्चन के नाम पंत के सौ पत्र", और डा० जीवन प्रकाश जोशी ने "बच्चन : पत्रों में" शीर्षक पत्र-संग्रह सम्पादित कर हिन्दी पत्र-साहित्य को समृद्ध किया । "फाइल और प्रोफाइल" में "उग्र" जी को प्राप्त विभिन्न हिन्दी साहित्यकारों के पत्र संकलित हैं । द्विवेदी-युग से लेकर वर्तमान युग के प्राय: सभी प्रसिद्ध साहित्यकारों के पत्र हमें इसमें उपलब्ध होते हैं । संग्रह में भूमिका ("पूर्वाभास") के बाद सभी पत्र-लेखकों का संक्षिप्त परिचय भी दिया गया है । इस प्रकार एक प्रसिद्ध साहित्यकार के नाम इतने अधिक साहित्यकों के पत्र जिसमें प्रकाशित हों, ऐसा यह प्रथम पत्र-संग्रह हैं । बच्चन जी के नाम लिखे गये पन्त के सौ पत्रों में दो प्रसिद्ध हिन्दी साहित्यकारों की प्रगाढ़ मैत्री का परिचय मिलता है । ये पत्र १९६० से १९६२ के बीच की अवधि में लिखे गये हैं । "बच्चन: पत्रों में" शीर्षक पत्र-संग्रह में डा० जीवन प्रकाश जोशी के नाम लिखे गये, बच्चन जी के १०५ पत्र संकलित हैं । इन पत्रों का लेखन-काल १९५६-१९७० ई० है । इसमें "प्रश्न: पत्रोत्तर" विभाग में सम्पादक के प्रश्नों के उत्तर में बच्चनजी ने जो उत्तर लिख भेजे हैं उनमें उनके जीवन-चरित्र के अनेक सूत्र प्राप्त होते हैं । संग्रहका "परिशिष्ट" भी अपने ढंग का अनूठा है ।

सन् १९७१ में प्रकाशित पत्र-संग्रहों में जानकीवल्लभ शास्त्री द्वारा सम्पादित "निराला के पत्र," बच्चन द्वारा सम्पादित "पंत के दो सौ पत्र" और बाबू वृन्दावनदास द्वारा सम्पादित "डा० बनारसीदास चतुर्वेदी के पत्र" शीर्षक पत्र-संग्रहों के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं । "नि-"निराला के पत्र" में महाकवि निराला द्वारा जानकीवल्लभ शास्त्री को लिखे गये १०९ पत्र संकलित हैं । ये पत्र जुलाई सन् १९३५ में शुरू होते हैं । और जनवरी सन् १९५७ में समाप्त होते हैं । महाकवि निराला के जीवन-चरित के अध्ययन के लिए ये पत्र अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं । संग्रह की भूमिका और पाद-टिप्पणियों में कहीं-कहीं अनावश्यक विस्तार हो गया है । "बच्चन के नाम पंत के दो सौ पत्र" में संकलित पत्र १९६२ से १९६७ के बीच

की अवधि में लिखे गये हैं। इन पत्रों में पंत जी के चिन्तन-मनन और परिहास-प्रिय स्वभाव का सुन्दर परिचय मिलता है। इसी पत्र-संग्रह के कुछ अंशों को आपत्तिजनक समझकर पंतजी ने बच्चन जी को उन्हें संग्रह से निकाल देने की सलाह दी थी, किन्तु बच्चन जी पत्रों को हूबहू प्रकाशित करने में पत्र-साहित्य का महत्व समझते हैं। अत: उन्होंने पंत जी का सुझाव स्वीकार नहीं किया। फलत: पंत जी ने उन पर मुकदमा दायर कर दिया।" डा० बनारसीदास चतुर्वेदी के पत्र" शीर्षक पत्र-संग्रह में पत्र-साहित्य के मर्मी विद्वान् पं० बनारसीदास चतुर्वेदी के २२१ पत्र संगृहीत हैं। इनमें से १५० पत्र, संग्रह के सम्पादक बाबू वृन्दावनदास को लिखे गये हैं। अन्य जिन विद्वानों के नाम चतुर्वेदी के पत्र संकलित हैं उनमें कुछ प्रमुख साहित्यकारों के नाम हैं - सर्वश्री श्रीनारायण चतुर्वेदी, डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी, श्री रामधारीसिंह, "दिनकर", अक्षयकुमार जैन, प्रभुदयाल मीतल, डा० सत्येन्द्र, डा० प्रभाकर माचवे आदि। इन पत्रों में चतुर्वेदी जी के विनोदी स्वभाव, उनकी विभिन्न योजनाओं, शहीदों के के प्रति उनकी श्रद्धा, कुटभाइयों के प्रति उनकी सहानुभूति आदि अनेक महत्वपूर्ण विशेषताएं दृष्टिगोचर होती हैं।

सन् १९७२-७३ में प्रकाशित पत्र-संग्रहों में श्री निरंकार देव सेवक द्वारा सम्पादित" बच्चन के पत्र" और सस्ता साहित्य मंडल, दिल्ली की ओर से प्रकाशित "स्वतंत्र भारत की झलक"- ये दो पत्र-संग्रह उल्लेख के योग्य हैं।" बच्चन के पत्र" शीर्षक पत्र-संग्रह में बच्चन जी द्वारा निरंकार देव सेवक को लिखे गये ७० पत्र संकलित हैं। ये पत्र जुलाई सन् १९३८ से आरम्भ होते हैं और सितम्बर सन् १९६७ में समाप्त होते हैं। इन पत्रों में बच्चन जी का व्यक्तित्व पूर्व प्रकाशित "बच्चन: पत्रों में" संग्रह में संकलित पत्रों से अपेक्षाकृत अधिक खुलकर प्रकट हुआ है।" स्वतंत्र भारत की झलक" में भारत के प्रथम राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद की ओर से उनकी पुत्रीतुल्य डा० ज्ञानवती दरबार के नाम लिखे गये पत्र प्रकाशित हैं। इन पत्रों में स्वतंत्र भारत की अनेक राजनैतिक घटनाओं की झलक प्रस्तुत की गयी है।

सन् १९७४ में, बाबू वृन्दावनदास ने डा० वासुदेवशरण अग्रवाल द्वारा हिन्दी के प्रसिद्ध साहित्यकों के नाम लिखे गये पत्रों को संगृहीतकर

"डा० वासुदेवशरण अग्रवाल के पत्र" शीर्षक एक संग्रह प्रकाशित किया । प्रस्तुत संग्रह में डा० अग्रवाल के ३०२ पत्र संकलित हैं । संग्रह के प्राक्कथन और भूमिका में सम्पादक ने पत्र-साहित्य के महत्व पर प्रकाश डालते हुए डा० अग्रवाल की बहुमुखी प्रतिभा का विस्तार से परिचय दिया है । परिशिष्ट में पं० रामशंकर द्विवेदी , डा० अम्बाप्रसाद "सुमन"; श्री वेद-प्रकाश गर्ग, डा० श्याम वर्मा तथा डा० रामस्वरूप आर्य के विद्वतापूर्ण लेख संकलित हैं जिनमें डा० अग्रवाल के पत्र-साहित्य की विस्तृत चर्चा की गयी है । डा० अग्रवाल द्वारा जिन साहित्यकारों के नाम पत्र लिखे गये हैं उनमें श्री कृष्णानन्द गुप्त, अगरचन्द नाहटा, बनारसीदास चतुर्वेदी, डा० सत्येन्द्र, प्रभुदयाल मीतल, गणेश चौबे, डा० अम्बाप्रसाद "सुमन" आदि के नाम उल्लेख्य हैं । डा० अग्रवाल के धीर-गम्भीर और चिंतनशील व्यक्तित्व का सुन्दर परिचय हमें इन पत्रों में मिलता है । इसी वर्ष में मुहम्मद यूनुस द्वारा लिखित "कैदी के खत" नामक एक पुस्तक प्रकाशित हुई जिसमें २६ खत दिये गये हैं । इनमें २५ विभिन्न जेलों में १८ अक्टूबर, १९४२ से २२ मार्च १९४५ के बीच एक कैदी की हैसियत से और अंतिम पत्र ९ जनवरी १९७४ को दिल्ली में लिखा गया है । ये पत्र लेखक ने किसी के पास भेजने के लिए नहीं, बल्कि अपने एकांत के दर्द को भुलाने के लिए लिखे हैं । अत: ये व्यक्तिगत पत्र नहीं हैं । इन पत्रों की तुलना डैरिच बोन्हफेर (Dietrich Bonhoeffer) द्वारा लिखित "लेटर्स एण्ड पेपर्स फ्रोम प्रीजन"[१] से की जा सकती है ।

सन् १९७६ में दो अत्यन्त महत्वपूर्ण पत्र-संग्रह प्रकाश में आये एक श्री रत्नशंकर प्रसाद तथा डा० गिरीशचन्द्र त्रिपाठी द्वारा सम्पादित "प्रसाद के नाम पत्र" और दूसरा डा० रामविलास शर्मा द्वारा सम्पादित "निराला की साहित्य-साधना" खण्ड-३ । प्रथम संग्रह में प्रसाद जी के नाम लिखे गये छोटे-बड़े ६७ साहित्यकारों के पत्र संकलित हैं । इनमें से प्राय: सभी "प्रसाद" जी के समकालीन साहित्यकार, सम्पादक

---

१ देखिए :- " Letters and Papers from Prison " by Dietrich Bonhoeffer (1956), P. 41-54 .

और प्रकाशक हैं । इन्हों ने समय-समय पर जो पत्र लिखे हैं, उनमें किसी पत्र-पत्रिका के लिए प्रकाशनार्थ रचना भेजने का आग्रह अथवा किसी कवि सम्मेलन में सम्मिलित होने का अनुरोध है । ग्रंथ की सामग्री सुनियोजित है । लेखकों के पत्र-अकारादि क्रम से रखे गये हैं किन्तु जैसा कि डा० सूर्यप्रसाद दीक्षित ने मत व्यक्त किया है -" यदि इन पत्रों को तिथि-क्रम के अनुसार रखा जाता है तो इनके द्वारा कई वृत्तान्तों का प्रामाणिक (व साथ ही विकासात्मक विवरण) प्राप्त होता है ।"[१] संक्षेप में इन पत्रों में छायावादयुगीन हिन्दी जगत् के अनेक स्पन्दन हैं ।

हिन्दी साहित्यकारों के प्रकाशित पत्र-संग्रहों में "निराला की साहित्य-साधना भाग-३" एक अनुपम पत्र-संग्रह है । यहां हमें निराला जी को लिखे हुए तथा उनके लिखे हुए पत्र एक साथ पढ़ने को मिलते हैं । इस प्रकार यहां हम निराला जी के सहयोगियों के माध्यम से स्वयं निराला जी को देखते हैं और निराला जी के माध्यम से उनके सहयोगियों को । सम्पादक ने बड़ी कुशलता से संग्रह का सम्पादन किया है । यह बृहत् पत्र-संग्रह तीन खण्डों में विभाजित है । प्रथम खण्ड में निराला जी को विभिन्न साहित्यकारों द्वारा लिखे गये पत्र कालक्रमानुसार संकलित हैं, द्वितीय खण्ड निराला जी द्वारा अपने समकालीन और परवर्ती लेखकों तथा स्वजनों को लिखे गये पत्र संगृहीत हैं और तृतीय खण्ड में कुछ आवश्यक कागज़-पत्र संकलित हैं जो या तो निराला जी के बारे में सूचना देते है या फिर उनके व्यक्तित्व और मानसिकता को समझने में सहायता करते हैं । इस प्रकार निराला के युग और परिवेश की गम्भीर, आन्तरिक और मार्मिक जानकारी के लिए इस पत्र-संग्रह का ऐतिहासिक महत्व निर्विवाद है ।

सन् १९७७ में हमें श्रीमधुरेश द्वारा सम्पादित "यशपाल के पत्र" और सुश्री वीरेन्द्र सिन्धु द्वारा सम्पादित "सरदार भगतसिंह : पत्र और दस्तावेज़" शीर्षक दो महत्वपूर्ण पत्र-संग्रह प्राप्त होते हैं । इनमें

---

१ "प्रकर", जून १९७७, पृ० ८ ।

साहित्यिक दृष्टि से "यशपाल के पत्र" शीर्षक संग्रह अधिक महत्वपूर्ण है। इसमें मधुरेश के नाम लिखे गये यशपाल जी के ७१ पत्र संकलित हैं। ये पत्र १९५५ और १९७६ के बीच की अवधि में लिखे गये हैं। पत्र-संग्रह की भूमिका का स्वरूप एक लम्बे संस्मरणात्मक निबन्ध जैसा है जिसमें सम्पादक ने लेखक से अपनी पहचान का परिचय दिया है। पत्रों के सन्दर्भों की जानकारी के लिए स्थान-स्थान पर टिप्पणियां दी गई हैं। अपनी कृतियों के बारे में यशपाल जी ने इन पत्रों में अनेक ऐसी सूचनाएं दी हैं जिनसे उनके कथाकार को समझने में हमें पर्याप्त सहायता मिलती है। डा० प्रेमशंकर के शब्दों में "यशपाल के ये पत्र कथाकार के विषय में ढेर सारी सामग्री देते हैं - संक्षेप में ही सही और इससे किसी भी शोधकार्य अथवा समीक्षा में निश्चित सहायता मिलती है।"[1] "सरदार भगतसिंह : पत्र और दस्तावेज" शीर्षक संग्रह में अमर शहीद भगतसिंह द्वारा अपने स्वजन-परिजनों तथा इष्ट-मित्रों को लिखे गये कुछ महत्वपूर्ण पत्र संकलित है। इन पत्रों से ज्ञात होता है कि भगतसिंह एक अध्ययनशील, कर्मठ और राष्ट्र-प्रेमी व्यक्ति थे।

सन् १९७८ ई० में प्रकाशित पत्र-संग्रहों में श्री रमण शांडिल्य द्वारा सम्पादित "बाबू वृन्दावनदास के पत्र" तथा इमरोज़ द्वारा सम्पादित "दस्तावेज़" विशेषरूप से उल्लेखनीय हैं। बाबू वृन्दावनदास हिन्दी पत्र-विधा के प्रमुख उन्नायकों में से हैं। वे एक कुशल सम्पादक और अच्छे पत्र-लेखक हैं। उनके द्वारा समय-समय पर हिन्दी के विभिन्न क्षेत्रों के विद्वानों को लिखे गये पत्र "बाबू वृन्दावनदास के पत्र" शीर्षक संग्रह में प्रकाशित हैं। इसमें कुलमिलाकर ४९१ पत्र संकलित हैं। जिन विद्वानों को पत्र लिखे गये हैं उनमें पं० बनारसीदास चतुर्वेदी, कन्हैयालाल मिश्र, "प्रभाकर", यशपाल जैन जैसे हिन्दी के वरिष्ठ साहित्याकार, श्री अगरचन्द नाहटा, कृष्णानन्द गुप्त, उदयशंकर शास्त्री जैसे पुरातत्व एवं लोकसाहित्य के ज्ञाता और डा० रामशंकर द्विवेदी, डा० रामस्वरूप आर्य, डा० लक्ष्मीनारायण दुबे, डा० लल्लन मिश्र जैसे विश्वविद्यालयों के प्राध्यापकों का

---

१ "समीक्षा", जनवरी-फरवरी १९७९, पृ० ३० ।

समावेश है । इन पत्रों से बाबू जी विशाल सम्पर्क का पता चलता है और उनकी हिन्दी-सेवा का साक्षात्कार होता है । "दस्तावेज" शीर्षक संग्रह में हिन्दी की प्रसिद्ध कथा-लेखिका अमृता प्रीतम द्वारा इमरोज़ के नाम लिखे गए पत्र संकलित हैं । इन पत्रों में सर्वत्र एक नारी-हृदय का स्पन्दन मिलता है । हिन्दी के उत्तम प्रेम-पत्रों में इनकी गिनती की जा सकती है ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि हिन्दी में महत्वपूर्ण व्यक्तियों के पत्रों को संगृहीत कर पुस्तकाकार प्रकाशित करने की प्रवृत्ति का प्रारम्भ १९१० ई० से ही हो गया था, किन्तु प्रारम्भिक दशकों में आर्य-समाजी लेखकों के सिवा अन्य हिन्दी लेखकों एवं विद्वानों ने इस विधा के विकास की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया । प्रारम्भ में हमारे यहां पत्रों के संग्रह, सम्पादन और प्रकाशन का आदर्श भी सम्यक् रूप से स्थापित नहीं हुआ जिसके कारण इस दिशा में अपेक्षित कार्य नहीं हो पाया । स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद हिन्दी पत्र-साहित्य के विकास में अधिक गतिशीलता परिलक्षित होती है । हिन्दी के महान् साहित्यकारों के पत्र-संग्रह स्वातंत्र्योत्तरकाल में ही प्रकाशित हुए हैं । पिछले तीन दशकों से अनेक महान् साहित्यिकों के पत्र-संग्रह प्रकाश में आ चुके हैं । इन पत्र-संग्रहों के अतिरिक्त अनेक स्मृति-ग्रंथों, अभिनन्दन-ग्रंथों, शोध-प्रबन्धों, पत्र-पत्रिकाओं आदि में भी साहित्यकारों तथा महापुरूषों के मूल्यवान् पत्र प्रकाशित हुए हैं । अत: यहां उनका संक्षिप्त विवरण अप्रासंगिक न होगा ।

हिन्दी के विविध ग्रंथों एवं पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित पत्र-साहित्य :

साहित्य, राजनीति आदि विभिन्न क्षेत्रों की महान् विभूतियों से सम्बद्ध ग्रंथों एवं दैनिक, साप्ताहिक, मासिक आदि पत्र-पत्रिकाओं में भी पत्र-साहित्य का अमूल्य भण्डार संकलित है । अवलोकन की सुविधा की दृष्टि से इसे निम्नांकित शीर्षकों में वर्गीकृत किया जा सकता है :-

(१) स्मृति एवं अभिनन्दन-ग्रंथों में संकलित पत्र ,

(२) शोध-प्रबन्धों के परिशिष्टों में संगृहीत पत्र,

(३) जीवन-चरित एवं व्यक्तित्व-कृतित्व-विषयक ग्रंथों में उपलब्ध पत्र और -

(४) दैनिक, साप्ताहिक, मासिक आदि पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित पत्र ।

साहित्यिक विद्वानों तथा राजनैतिक नेताओं को भेंट करने के लिए प्रकाशित किये गये स्मृति-ग्रंथों एवं अभिनन्दन-ग्रंथों में पत्र-साहित्य का एक विशाल भण्डार भरा है । यहां कुछ मुख्य ग्रंथों में संकलित पत्रोंका विवरण दिया जाता है ।

श्री झाबरमल्ल शर्मा तथा बनारसीदास चतुर्वेदी द्वारा सम्पादित "बालमुकुन्द गुप्त-स्मारक-ग्रंथ" (१९५०) में महामना पं० मदनमोहन मालवीय, पं० श्रीधर पाठक, पं० प्रतापनारायण मिश्र आदि साहित्यकों द्वारा गुप्त जी को लिखे गये पत्र अनेक स्थलों पर ससन्दर्भ उद्धृत किये गये हैं । आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी तथा गुप्त जी का पत्र-व्यवहार भी इसमें प्रकाशित किया गया है । डा० वासुदेवशरण अग्रवाल और अन्य विद्वानों द्वारा सम्पादित "राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त अभिनन्दन-ग्रंथ" (१९५९) के द्वितीय-खण्ड "जीवनी और पत्र"- में गुप्त जी के बहुमूल्य पत्र संकलित हैं । नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली से "एक व्यक्ति : एक संस्था (१९६६) शीर्षक से प्रकाशित "सोमचन्द्र" सुमन अभिनन्दन-ग्रंथ में "सुमन" जी के नाम लिखे गए माखनलाल चतुर्वेदी, कन्हैयालाल मिश्र "प्रभाकर," सियाराम शरण गुप्त, राजर्षि टंडन, उदयशंकर भट्ट, आचार्य चतुरसेन शास्त्री आदि साहित्यकों के महत्वपूर्ण पत्र प्रकाशित हैं । श्री शिवप्रसाद सिंह द्वारा सम्पादित आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी अभिनन्दनग्रंथ -" शांतिनिकेतन से शिवालिक" (१९६७)- के "एक इण्टर्व्यू: कुछ पत्र" शीर्षक खण्ड में आचार्य द्विवेदी को प्रेषित महादेवी वर्मा, सोहनलाल द्विवेदी, वियोगी हरि, राहुल सांकृत्यायन, नन्ददुलारे वाजपेयी, बनारसीदास चतुर्वेदी, शिवमंगलसिंह "सुमन", सुमित्रानन्दन पंत आदि साहित्यकारों के पत्र संकलित हैं । " एक कवि : एक देश" (१९६९) शीर्षक से प्रकाशित सोहनलाल द्विवेदी अभिनन्दनग्रंथ में श्री निरंकारदेव के नाम लिखे गये द्विवेदी जी के कुछ मधुर पत्र "हृदय की धड़कनों के स्वर" शीर्षक लेख में उद्धृत किये गये हैं । डा० शिवनन्दन प्रसाद और अन्य विद्वानों द्वारा सम्पादित "राजा राधिकारमण प्रसाद सिंह अभिनन्दन ग्रंथ" (१९६९) के "पत्रांजलि" शीर्षक खण्ड में डा० वासुदेवनन्दन प्रसाद तथा डा० गोपालप्रसाद "वंशी" को लिखे राजा साहब के अनेक अनूठे पत्र संकलित हैं । शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी, आगरा से प्रकाशित "बाबू गुलाबराय स्मृति-ग्रंथ (१९७०) में बाबू जी द्वारा डा० विजयेन्द्र स्नातक तथा डा० गंगाप्रसाद गुप्त को

लिखे गये पत्रों में बाबू जी के जीवन और उनकी साहित्यसाधना का सुन्दर परिचय मिलता है । सस्ता साहित्य मंडल, दिल्ली से "प्रेरक साधक" (१९७०) शीर्षक से प्रकाशित पं० बनारसीदास चतुर्वेदी अभिनन्दन-ग्रंथ के खण्ड-४ में चतुर्वेदी जी के अनेक "प्रेरक पत्र" संकलित हैं । इस प्रकार हिन्दी पत्र-साहित्य के विकास में इन ग्रंथों का योग कम महत्वपूर्ण नहीं है ।

हिन्दी के कुछ शोध-प्रबन्धों के परिशिष्टों में शोधकर्ताओं द्वारा संगृहीत अनेक बहुमूल्य पत्र प्रकाशित हुए हैं । इन पत्रों से हिन्दी साहित्य की विभिन्न प्रवृत्तियों तथा विधाओं के सम्बन्ध में अच्छी जानकारी मिलती है । यहां हम इस प्रकार की पत्र-सामग्री का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत करते हैं ।

डा० शितिकण्ठ मिश्रलिखित "खड़ी बोली का आन्दोलन" (१९५६) के परिशिष्ट (क) में प्रकाशित अयोध्याप्रसाद खत्री और पं० श्रीधर पाठक के पत्र खड़ी बोली आंदोलन को समझने के लिए अत्यन्त उपयोगी हैं । डा० पद्मसिंह शर्मा "कमलेश" लिखित "हिन्दी गद्य-काव्य" (१९५८) के परिशिष्ट-२ में हिन्दी के अनेक प्रसिद्ध विद्वानों एवं गद्य-काव्य-लेखकों (वृन्दावनलाल वर्मा, वियोगी हरि, विनोदशंकर व्यास, सद्गुरुशरण अवस्थी, डा० रघुवीर सिंह आदि) के पत्र प्रकाशित हैं । प्रबन्ध-लेखक को गद्य काव्य के स्वरूप-निर्धारण में इन पत्रों से पर्याप्त सहायता मिली है । डा० रामेश्वरलाल खण्डेलवाल लिखित "जयशंकर प्रसाद : वस्तु और कला" (१९६८) के परिशिष्ट-६ में प्रसादजी की साहित्य-साधना के विषय में प्रबन्ध-लेखक तथा आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी के बीच हुए पत्र-व्यवहार के कुछ महत्वपूर्ण अंश प्रश्नोत्तर रूप में प्रकाशित हैं । डा० शांति प्रकाश वर्मा लिखित "प्रताप-नारायण मिश्र की हिन्दी गद्य को देन" (१९७०) के परिशिष्ट-४ में मिश्र जी द्वारा बाबू बालमुकुन्द गुप्त, राधाकृष्णदास आदि साहित्यकारों को प्रेषित कुछ रोचक पत्र प्रकाशित हैं । डा० मधुकर भट्टलिखित "पं० बालकृष्ण भट्ट : व्यक्तित्व और कृतित्व" (१९७२) के परिशिष्ट-५ में भट्ट जी के जो तीन-चार पत्र दिये गये हैं, उनमें पं० श्रीधर पाठक के नाम लिखा एक पद्य-बद्ध पत्र भी सम्मिलित है । डा० खेलचन्द आनन्दलिखित "महापंडित राहुल सांकृत्यायन का सर्जनात्मक साहित्य" (१९७३) के परिशिष्ट-४ में उद्धृत डा० कमला सांकृत्यायन, डा० महादेव साहा तथा भदन्तानन्द -

कौशल्यायन के पत्रों से राहुल जी के सर्जनात्मक साहित्य के सम्बन्ध में अनेक नयी बातें जानने को मिलती हैं । डा० रामचन्द्र पुरोहित- लिखित "प्रेमघन और उनका कृतित्व" (१९७६) के परिशिष्ट-२ में "प्रेमघन" जी द्वारा प्रेषित और प्राप्त अनेक मूल्यवान् पत्र प्रकाशित हैं । डा० रमाकान्त श्रीवास्तवलिखित "व्यक्तिवादी एवं नियतिवादी चेतना के सन्दर्भ में उपन्यासकार भगवतीचरण वर्मा" (१९७७) के परिशिष्ट-२ में संकलित पत्रों से वर्माजी के जीवन-दर्शन की झाँकी मिलती है । इस प्रकार इन पत्रों का अपना पृथक् महत्व है ।

जीवन-चरित एवं व्यक्तित्व-कृतित्व-सम्बन्धी अनेक ग्रंथों में विपुल पत्र-सामग्री उपलब्ध होती है । हिन्दी में ऐसी कई जीवनियाँ एवं आत्मकथाएं मिलती हैं ; जिनमें चरित-नायक से सम्बन्धित कुछ महत्वपूर्ण पत्र या तो एक स्वतंत्र प्रकरण में प्रकाशित किये गये हैं या परिशिष्ट में । इस प्रकार के ग्रंथों में बाबू शिवनन्दन सहायकृत "हरिश्चन्द्र" (१९०५), सेठ गोविन्ददासकृत "आत्म-निरीक्षण" भाग-३ (१९५८), व्रजरत्नदासकृत "भारतेन्दु हरिश्चन्द्र" (१९६२), आचार्य चतुरसेन शास्त्रीकृत "मेरीकहानी" (१९६२), डा० भगवतीप्रसाद सिंहकृत "मनीषी की लोकयात्रा" (१९६८), शम्भुप्रसाद बहुगुणाकृत "गोविन्दवल्लभ पन्त: एक जीवनी" (१९७२) आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं ।

निम्नलिखित जीवन-चरित्रों में प्रसंगोपात चरित-नायक से सम्बन्धित पत्र उद्धृत किये गये हैं :-

पं० बनारसीदास चतुर्वेदीकृत "कविरत्न सत्यनारायण जी की जीवनी" (१९२६), पं० लक्ष्मीशंकर व्यास कृत "पराड़कर जी और पत्रकारिता" (१९६०), अमृतरायकृत "प्रेमचन्द: कलम का सिपाही" (१९६२), मदनगोपालकृत "कलम का मजदूर प्रेमचन्द" (१९६५), डा० रामविलास शर्मा कृत "निराला की साहित्यसाधना, भाग-१" (१९६९), मदनगोपालकृत "भारतेन्दु हरिश्चन्द्र" (१९७६), और डा० शांति जोशी कृत "सुचित्रानन्दन पन्त : जीवन और साहित्य" भाग-२ (१९७७) ।

जिन संस्मरणग्रंथों में हिन्दी साहित्यकारों के उत्प्रेरक एवं मनोरंजक पत्र देखने को मिले हैं उनमें पं० बनारसीदास चतुर्वेदी कृत -

"संस्मरण" (१९५२), राहुल सांकृत्यायनकृत "यात्रा के पन्ने" (१९५२), आचार्य किशोरीदास वाजपेयीकृत "द्विवेदी जी और उनके संगी-साथी" (१९६५), रामनाथ सुमनकृत "छाया वादयुगीन स्मृतियां" (१९७५) तथा मैंने स्मृति के दीप जलाये" (१९७६), श्रीनारायण चतुर्वेदीकृत "मनोरंजक संस्मरण (१९७७) आदि ग्रंथों के नाम उल्लेख्य हैं ।

लेखक के व्यक्तित्व और कृतित्व-विषयक ग्रंथों में भी प्रसंगोपात अथवा परिशिष्ट रूप में पत्रों को स्थान देनेकी परम्परा चल पड़ी है । इस प्रकार के ग्रंथों में डा० प्रभाकर माचवे द्वारा सम्पादित "जैनेन्द्र के विचार" (१९३७), हरिवंशराय "बच्चन" कृत "कवियों में सौम्य संत" (१९६०) गोविन्द अग्रवाल कृत "पत्रों के प्रकाश में स्वामी गोपालदासजी का व्यक्तित्व एवं कृतित्व" (१९६८), डा० ब्रह्मानन्द द्वारा सम्पादित "राहुल सांकृत्यायन : व्यक्तित्व और कृतित्व" (१९७१), जगदीशप्रसाद पीयूष द्वारा सम्पादित "पं० रामनरेश त्रिपाठी : एक युग, एक व्यक्तित्व" (१९७४) रवीन्द्र कालिया द्वारा सम्पादित "अमरकान्त" (१९७७) आदि ग्रंथस्मरणीय हैं ।

आधुनिक युग की अन्य गद्य-विधाओं के समान पत्र-विधा के विकास में भी हिन्दी पत्रकारिता से अपूर्व सहयोग प्राप्त हुआ है । महत्वपूर्ण व्यक्तियों के पत्र, पुस्तक के रूप में प्रकाशित होने से पहले पत्र-पत्रिकाओं में ही प्रकाशित हुए हैं । अब भी हिन्दी का प्रचुर पत्र-साहित्य पत्र-पत्रिकाओं के अंकों में बिखरा पड़ा है । कुछ पत्रिकाओं ने पत्र-विशेषांक भी प्रकाशित किये हैं । श्री नन्दकिशोर तिवारी के सम्पादकत्व में प्रकाशित "चांद" का पत्रांक (मई १९२८) स्वतंत्रता-पूर्व पत्र-साहित्य के स्वरूप की झलक प्रस्तुत करता है और स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद के पत्र-साहित्य के स्वरूप एवं विकास की झांकी हमें श्री लक्ष्मीचन्द जैन तथा शरद देवड़ा द्वारा सम्पादित "ज्ञानोदय" के पत्रांक (नवम्बर १९६३) में मिलती है । इन पत्र-विशेषांकों के अतिरिक्त "वीणा" के नवीन-स्मृति-अंक (१९६०), "सम्मेलन पत्रिका" के श्रद्धांजलि-अंक (१९६२), "नर्मदा" के नवीन-अंक (१९६३), "भाषा" के द्विवेदी-स्मृति-अंक (१९६४), "साहित्य" (त्रै०) के शिवपूजन-स्मृति-अंक (१९६४), "राष्ट्रवाणी" के मुक्तिबोध अभिनन्दन-अंक (१९६५),

"वीणा" के अकविता-विशेषांक (१९६६), "पांचजन्य" के क्रांति-संस्मरण अंक (१९६८), "रसवन्ती" के माखनलाल चतुर्वेदी-अंक (१९६९) आदि में भी हिन्दी के प्रसिद्ध साहित्यकारों तथा राष्ट्र के उन्नायकों के मूल्यवान्-पत्र मूल्यवान् पत्र प्रकाशित हुए हैं ।

हिन्दी-पत्र-साहित्य के विकास में "सरस्वती" "विशाल भारत", "नागरी प्रचारिणी पत्रिका", "सम्मेलन पत्रिका" "हिन्दुस्तानी", "माध्यम", "आलोचना", "साप्ताहिक हिन्दुस्तान", "धर्मयुग", भारतीय साहित्य" आदि पत्र-पत्रिकाओं का योग भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि पुस्तक के रूप में जो पत्र-साहित्य प्रकाश में आया है, उससे कहीं अधिक मात्रा में हिन्दी के विविध ग्रंथों तथा पत्र-पत्रिकाओं के अंकों में प्रकाशित हुआ है । इसलिए हिन्दी पत्र-साहित्य के विकास की चर्चा में इसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती । अब यहां हम समग्ररूप में प्रकाशित सामग्री के आधार पर हिन्दी पत्र-साहित्य के विभिन्न चरणों का विश्लेषण करेंगे ।

(३) प्रकाशित सामग्री के आधार पर हिन्दी पत्र-साहित्य के विभिन्न चरणों का विश्लेषण

हिन्दी में प्राचीन युग से लेकर अब तक का जो प्रचुर पत्र-साहित्य प्रकाश में आया है, उसके विभिन्न चरणों को निम्नलिखित चार शीर्षकों में वर्गीकृत किया जा सकता है :-

(१) पूर्व-भारतेन्दुयुगीन पत्र-साहित्य ,
(२) भारतेन्दु-युगीन पत्र-साहित्य ,
(३) द्विवेदी-युगीन पत्र-साहित्य और
(४) वर्तमान-युगीन पत्र-साहित्य ।

आगे प्रत्येक युग के पत्र-साहित्य पर यथावश्यक प्रकाश डाला गया है ।

पूर्व-भारतेन्दु-युगीन पत्र-साहित्य :

पूर्व-भारतेन्दु-युगीन पत्र साहित्य का स्वरूप अधिकांशत: दस्तावेजी साहित्य जैसा है । दूसरे शब्दों में आलोच्य युग में पत्र-लेखन से कहीं अधिक पत्रों का आलेखन ही हुआ है । यही कारण है कि कलम को कागज पर रखकर जैसे भाव बहें, विचार उमड़े, लिखते चले जाने की प्रवृत्ति इस युग में कम पायी जाती है और कारण है कि इस काल के पत्रों में लेखक के व्यक्तित्व का सहज स्फुरण कम मिलता है । इसके बावजूद भी इसकाल के पत्रों का महत्व इसलिए है कि इनमें हमें प्राचीन राजनीति, समाज-व्यवस्था, धार्मिक प्रवृत्ति, भाषा-विकास आदि की यथार्थ जानकारी मिलती है । विषय की दृष्टि से इस काल के पत्रों को दो विभागों में बांटा जा सकता है :- (अ) प्रशासनिक पत्र और (आ)- व्यक्तिगत पत्र ।

(अ) प्रशासनिक पत्र :-

प्रशासन या सरकारी काम-काज से सम्बन्धित पत्रों को प्रशासनिक या सरकारी पत्र कहा जाता है । ये कई प्रकार के होते थे । जैसे- -फरमान, निशान, अर्जदास्त, सनद, परवाना, रूक्का, इत्यादि । बादशाही पत्रों को फरमान कहते हैं । इन्हें बादशाह किसी दूसरे व्यक्ति से लिखवाता या स्वयं लिखता है । निशान वे पत्र हैं जिन्हें शाहजादे, बादशाह को छोड़कर, अन्य व्यक्तियों को लिखते हैं । अर्जदास्त उन पत्रों को कहा जाता है जिन्हें प्रजावर्ग के लोग बादशाहों या शाहजादों को या शाहजादे बादशाहों को लिखते हैं । इसका संक्षिप्त रूप अर्जी है । सनद एक प्रकार का नियुक्ति पत्र है । किन्तु सूबेदारों की नियुक्ति के लिए फरमान शब्द ही प्रयुक्त है । परवाना उस प्रशासनिक पत्र की संज्ञा है जो अपने से छोटे अधिकारी को लिखा जाता है । रूक्का यद्यपि प्राइवेट पत्र की संज्ञा है, किन्तु राजा की ओर से प्राप्त पत्र को परवर्तीकाल में खास रूक्का कहने लगे ।[1]

---

१ " कुछ ऐतिहासिक रूक्के परवाने" (लेख),
डा० दशरथ शर्मा, "परम्परा" भाग-२४ ,
परिशिष्ट- ख, पृ० २ ।

उपर्युक्त सभी पत्रों के उदाहरण हमें डा० नारायणसिंह भाटी द्वारा सम्पादित "परम्परा भाग-२४" तथा डा० काशिनाथ शंकर केलकर द्वारा लिखित "१८ वीं शती के हिन्दी पत्र" में प्राप्त होते हैं। इसके अतिरिक्त डा० धीरेन्द्र वर्मा तथा डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय द्वारा सम्पादित "प्राचीन हिन्दी पत्र-संग्रह" में भी विभिन्न प्रकार के प्रशासनिक पत्र संकलित हैं। इन पत्रों में प्राप्त राजनैतिक, सामाजिक तथा धार्मिक सन्दर्भों की विस्तृत चर्चा आगे यथास्थान की जायेगी।

(आ) व्यक्तिगत पत्र :

व्यक्तिगत सम्बन्धों तथा समस्याओं की चर्चा जिन पत्रों में की जाती है, उन्हें व्यक्तिगत पत्र कहते हैं। प्राचीनकाल में राजाओं द्वारा अपने मित्रों, स्वजनों आदि को लिखे गये पत्र तथा धर्माचार्यों द्वारा अपने सहयोगियों, शिष्यों आदि को लिखे गये पत्र व्यक्तिगत पत्र के अन्तर्गत रखे जा सकते हैं। ये पत्र परम्परागत शैली में लिखे गये हैं और उनमें तत्कालीन शिष्टाचार का पूरा ध्यान रखा गया है। "परम्परा-भाग-२४ में राजस्थान के अनेक ऐतिहासिक व्यक्तियों के वैयक्तिक पत्र-रूक्के-संकलित हैं। इसी प्रकार "१८ वीं शती के हिन्दी पत्र" शीर्षक शोधप्रबन्ध में मराठा-शासकों के अनेक व्यक्तिगत पत्र संगृहीत हैं। "प्राचीन हिन्दी पत्र-संग्रह" में इस्ट इंडिया कम्पनी के प्रारम्भिक शासनकाल में नागरी अक्षरों में लिखे गये पत्र प्रकाशित हैं। ये पत्र देशी राजाओं, नवाबों, कम्पनी के गवर्नरों आदि के द्वारा लिखे गये हैं। इसके अतिरिक्त डा० महेन्द्रप्रताप-सिंह द्वारा सम्पादित "ऐतिहासिक प्रमाणावली और छत्रसाल" शीर्षक ग्रंथ में महाराजा छत्रसाल के अनेक सुन्दर वैयक्तिक पत्र संकलित हैं। जैसाकि हम पीछे देख चुके हैं, इन पत्रों के प्रारम्भ में लम्बी-लम्बी प्रशस्तियाँ देकर परस्पर के कुशल समाचार का उल्लेख किया जाता था। जैसे -

"श्री महाराजा धीराज श्री राजराजेन्द्र श्री सवाई माधोसींघजी योग्ये राज्यश्री जयाजी सींदे सुबेदारकेन श्री बंचणा आप्रंच आठकों समाचार भला छे आपको सदा सर्वदा भलें + चाहीजे - - - -"[१]

इस प्रकार इस युग के व्यक्तिगत पत्र भी एक तरह से रूढ़ पत्र प्रतीत होते हैं। इनमें साहित्यिक सौंदर्य बहुत कम है, तथापि इनका ऐतिहासिक महत्व है। अतः इनका उपयोग हम आगे यथास्थान करेंगे।

---

१ "१८ वीं शती के हिन्दी पत्र" (१९७०), पृ० ४०६।

भारतेन्दु-युगीन पत्र-साहित्य :

भारतेन्दु-युग को "पुनर्जागरण - काल" कहा गया है । श्री केसरीकुमार ने तो यहां तक कहा है कि - "भारतेन्दु का युग, भारत के लिए ही नहीं, अपितु संसार भर के लिए एक महान् जागरण का युग था । स्वदेश में ब्रह्म-समाज के प्रवर्तक राजा राममोहन राय थे, आर्य-समाज के विधाता कृष्ण दयानन्द थे । राजनैतिक नेता सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, दादाभाई नौरोजी, सर सैयद अहमद इत्यादि थे । आधुनिक शिक्षा के शिलान्यासकर्ता ईश्वरचन्द्र विद्यासागर थे । मोसदस के कवि हाली, 'वन्देमातरम्' के गीत के - प्रणेता बंकिमचन्द्र थे । विदेश में साम्यवाद के अवतार कार्ल मार्क्स और महर्षि एंजिल्स थे । मनोविश्लेषण के आचार्य फ्रायड थे ।"[1] इस प्रकार कहा जा सकता है कि भारतेन्दु-युग समग्र दृष्टि से नवजागरण का युग + था ।

यद्यपि भारतेन्दु-युग में किसी महत्वपूर्ण व्यक्ति के पत्रों का कोई स्वतंत्र संग्रह प्रकाशित नहीं हुआ, किन्तु पत्र-पत्रिकाओं में साहित्यकारों तथा अन्य क्षेत्रों की विभूतियों के पत्रों को प्रकाशित करने की प्रवृत्ति का आरम्भ इसी युग में हो चुका था ।[2] यही नहीं "कृष्ण दयानन्द का पत्र व्यवहार भाग-१" शीर्षक जिस पत्र-संग्रह से हिन्दी में पत्र-साहित्य की विधिवत् परम्परा का सूत्रपात हुआ, उस संग्रह में संकलित पत्रों का सम्बन्ध इसी युग से है । कृष्ण दयानन्द सरस्वती भारतेन्दु-युग अर्थात् पुनर्जागरण-काल की ही एक महान् विभूति थे । अत: इसी युग को हिन्दी पत्र-साहित्य का यथार्थ विकास-चरण मानना युक्ति-संगत प्रतीत होता है । पूर्व-भारतेन्दु-युग से सम्बन्धित जो पत्र-सामग्री प्राप्त होती है, वह ऐतिहासिक दृष्टि से तो उपयोगी है, किन्तु साहित्यिक दृष्टि से उसका अधिक महत्व नहीं है । पत्रों में साहित्यिक विषयों की चर्चा का आरम्भ भारतेन्दु-युग से ही हुआ है । यद्यपि इस युग के प्रमुख साहित्यकारों के पत्रों का कोई स्वतंत्र

---

१ "साहित्य और समीक्षा" (प्र०सं०), पृ० ३१ ।

२ देखिए: "ब्राह्मण," खण्ड-४, सं०-१२, पृ० १२ पर प्रकाशित पं० अयोध्यासिंह उपाध्याय "हरिऔध" का १३-५-१८८२ का पत्र ।

संग्रह देखने को नहीं मिलता , किन्तु हिन्दी के विविध ग्रंथों तथा पत्र-पत्रिकाओं के अंकों में इस युग के साहित्यकारों के जो पत्र प्रकाशित हुए हैं उनको देखने से पता चलता है इस युग में पत्र-लेखन कला का स्तरीय विकास हो चुका था ।

प्रमुख पत्र-लेखक :

आलोच्य युग के प्रमुख पत्र-लेखकों में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और महर्षि दयानन्द सरस्वती के नाम विशेष रूप से स्मरणीय हैं । ये दोनों ही पुनर्जागरण-काल की महान् विभूतियां हैं । डा० चन्द्रभानु सोनवणे के शब्दों में "स्वामी दयानंद सरस्वती एवं भारतेन्दु हिन्दी भाषी प्रदेश में आधुनिकता के अग्रदूत रहे हैं । स्वामी दयानंद सरस्वती ने धार्मिक एवं सामाजिक क्षेत्र में पुनर्जागरण के आन्दोलन का नेतृत्व किया था, तो भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने साहित्यिक क्षेत्र में ।"[१] इस प्रकार इस युग के साहित्यिक क्षेत्र में जो स्थान भारतेन्दु हरिश्चन्द्र को प्राप्त है वही स्थान सांस्कृतिक क्षेत्र में स्वामी दयानंद सरस्वती को । भारतेन्दु जी ने अपने पत्रों से हिन्दी साहित्य के विकास में सहयोग प्रदान किया तो स्वामी जी ने अपने पत्रों से हिन्दी-भाषी प्रदेशों में सांस्कृतिक चेतना का विकास किया । अत: यहां हम सबसे पहले इन दोनों के पत्र-साहित्य का संक्षिप्त परिचय देकर अन्य पत्र-लेखकों की चर्चा करेंगे । इन प्रमुख पत्र-लेखकों का विस्तार से अध्ययन अगले अध्याय में करेंगे ।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र :

इस बात का संकेत किया जा चुका है कि हिन्दी साहित्य में सर्वप्रथम पत्र-लेखक भारतेन्दु हरिश्चन्द्र हुए हैं । हिन्दी में नये चाल के पत्र उन्हों ने ही चलाये । पत्र-लेखन कला विषयक उनकी गहरी सूझ-बूझ का परिचय हमें उनकी "प्रशस्ति - संग्रह अथवा पत्र-बोध" शीर्षक पुस्तक में मिलता है । प्रस्तुत पुस्तक में उन्हों ने अपने समय में प्रचलित पत्रोत्तर देनेकी

---

१ "भारतेन्दु के विचार : एक पुनर्विचार"
(१९७७), पृ० ८ ।

एक कलात्मक रीति का सुन्दर उदाहरण भी दिया है ।[१] इससे स्पष्ट होता है कि उनके युग में पत्र-व्यवहार ने साहित्यिक विनोद का रूप धारण कर लिया था ।

भारतेन्दु द्वारा लिखे गये पत्रों का कोई स्वतंत्र संग्रह तो उपलब्ध नहीं होता, परंतु उन पर लिखे गये जीवनी-ग्रंथों तथा उनके सहयोगी साहित्यकारों पर लिखे गये शोध-प्रबन्धों के परिशिष्टों में उनके जो पत्र प्राप्त होते हैं उनसे यह स्पष्ट हो जाता है कि वे एक उच्चकोटि के पत्र-लेखक थे । उनके पत्र-साहित्य की विस्तृत चर्चा हम अगले अध्याय में करेंगे ।

१" प्रशस्ति संग्रह,"
भारत कला भवन, बनारस में सुरक्षित टंकित प्रति,
पृ० १२ ।

" श्रीयुत राजा शिवप्रसाद साहब को मैंने एक बेर रुक्का लिखा था । (उन्हों ने अपना फोटोग्राफ देने को कहा था, वह मंगाने हेतु)

" इसी शेर के मुताबिक जवाब दीजिएगा -
कमाल शौके-मुलाकात उसने लिखा है
चलूं मैं आप ही कासिद जवाब के बदले ।"

उन्होंने लिफाफे में अपना फोटोग्राफ रख दिया और मेरे रुक्के को यों काट दिया -

" इसी शेर के मुताबिक जवाब दीजिएगा ,
दिया है - कमाल शौके- मुलाआत उसने लिखा है
चला मैं आप ही कासिद जवाब के बदले । "

महर्षि दयानन्द सरस्वती :

जैसाकि कहा जा चुका है, हिन्दी-भाषी प्रदेशों में, धार्मिक एवं सामाजिक क्षेत्र में पुनर्जागरण के आन्दोलन का नेतृत्व स्वामी - दयानन्द सरस्वती ने ही किया था । उन्होंने अपने मंतव्यों का प्रचार करने के लिए हिन्दी को अपने विचारों की अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया । पहले वे संस्कृत में पत्र लिखते थे अथवा दूसरों को बोलकर लिखवाते थे अथवा लिखने को कह दिया करते थे और हस्ताक्षर कर देते थे, किन्तु सन् १८७३ ई० के अंतभाग से हिन्दी में उनका पत्र-व्यवहार आरम्भ हुआ और अंतिम समय सन् १८८३ तक चलता रहा । उन्हों ने इन दश वर्षों में सैकड़ों पत्र लिखे । स्व० महात्मा मुंशीराम, पं० भगवद्दत्त, पं० चमूपति आदि आर्य-समाजी विद्वानों ने उनका पत्र-साहित्य पुस्तक के रूप में प्रकाशित कर हिन्दी पत्र-साहित्य की महती सेवा की है । स्वामीजी के पत्र-साहित्य की विस्तृत समीक्षा अगले अध्याय में प्रस्तुत की जायेगी यहां यही कहना पर्याप्त होगा कि भारतेन्दु-युग में महर्षि दयानन्द सरस्वती ही एक ऐसी विभूति हैं जिनका पत्र-साहित्य कई खण्डों में प्रकाशित हो चुका है । अत: आलोच्य युग के प्रमुख पत्र-लेखकों में भारतेन्दु के बाद उन्हीं का स्थान है ।

अन्य पत्र-लेखक :

भारतेन्दु-युग के अन्य पत्र-लेखकों में भारतेन्दु-मण्डल के उन साहित्यकारों का उल्लेख किया जा सकता है, जिनके कुछ महत्वपूर्ण पत्र प्रकाश में आये हैं । इस दृष्टि से यहां तीन साहित्यकारों-बदरीप्रसाद उपाध्याय "प्रेमघन," प्रतापनारायण मिश्र और राधाकृष्णदास - के नाम उल्लेखनीय हैं ।

बदरीप्रसाद उपाध्याय "प्रेमघन":

भारतेन्दु-मण्डल के साहित्यकारों में "प्रेमघन" जी का प्रमुख स्थान था । वे " आनन्दकादम्बिनी " के यशस्वी सम्पादक थे । अपने समकालीन

साहित्यकारों से उनका अच्छा सम्पर्क था । डा० रामचन्द्र पुरोहित ने अपने "प्रेमघन और उनका कृतित्व" शीर्षक शोध-प्रबन्ध के परिशिष्ट-२ में उनका पत्र-व्यवहार प्रकाशित किया है । यद्यपि इसमें "प्रेमघन" जी के लिखे हुए पत्र कम हैं, फिर भी इन पत्रों से उनके कलात्मक व्यक्तित्व का अच्छा परिचय मिलता है ।

"प्रेमघन और उनका कृतित्व" शीर्षक प्रबन्ध में हमें "प्रेमघन" जी के चार पत्र मिलते हैं । एक उन्होंने अपने अनुज पं० मथुराप्रसाद उपाध्याय को लिखा है, दूसरा डा० ग्रियर्सन को, तीसरा पं० रामगरीब चौबे को और चौथा पं० लोचनप्रसाद पाण्डेय को । इनमें डा० ग्रियर्सन और उनके सहकारी पं० रामगरीब चौबे को लिखे गये पत्र विषय और शैली की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं । ग्रियर्सन के नाम लिखे पत्र से एक ओर जहां इन दोनों साहित्यिकों के पारस्परिक सम्बन्ध पर प्रकाश पड़ता है, वहां दूसरी ओर "प्रेमघन" जी की रंगीन तबीयत का संकेत भी मिलता है। पूरा पत्र अनुप्रास की छटा से ओतप्रोत है । यहां हम उसका प्रारम्भिक अंश प्रस्तुत करते हैं :-

" मित्रवर ,

आजकल फागुन का अध्याय है, शहर में ब्याह-शादियों की धूम-धाम है, इसी से मुझे भी बरातों से काम है, नाच व रंग से दिल को बहुत आराम है, कि इसी से फुरसत न कोई काम है ।"[1]

इससे स्पष्ट होता है कि "प्रेमघन" के निबन्धों की तरह उनके पत्र भी आलंकारिक सौंदर्य से अभिमंडित होते थे । उनकी निबन्ध-लेखनकला के सम्बन्ध में व्यक्त किया गया डा० ओंकारनाथ शर्मा का यह मत कि- "ये अलंकार-शैली के प्रकांड पंडित थे, तथा शब्द-चयन पर इनकी विशेष दृष्टि रहती थी । इन्होंने गद्य में कोमल पद-रचना का सफलतापूर्वक प्रयोग किया है,"[2] उनकी पत्र-लेखन कला पर भी चरितार्थ होता है ।

---

१ "प्रेमघन और उनका कृतित्व" (१९७६), परिशिष्ट-२, पृ० ७ ।

२ "हिन्दी निबन्ध का विकास" (१९६४), ~~परिशिष्ट-२~~, पृ०-१२६।

"प्रेमघन" जी के कवित्वमय पत्र पाकर मित्र लोग झूम उठते थे। उनके एक पत्र के उत्तर में श्री कृष्णशरण सिंह ने लिखा है कि- "प्रियवर! वल्लाह, सत क्या है खतों का एसन्स(Essence) याने रूव है, जौहर है, लुब्बेलुबाब है, निचोड़ है, खुलासा है - - -"[1]

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि न केवल भारतेन्दु-युगीन पत्र-साहित्य में, वरन् समस्त हिन्दी-पत्र-साहित्य में आलंकारिक शैली की दृष्टि से "प्रेमघन" जी के पत्रों का विशिष्ट स्थान है।

प्रताप नारायण मिश्र :

भारतेन्दु-मण्डली के लेखकों में पं० प्रतापनारायण मिश्र का नाम उनके चुलबुलेपन, मसखरेपन, फक्कड़पन, अल्हड़पन आदि के कारण विशेष रूप से स्मरणीय है। "प्रतापनारायण-ग्रंथावली" के सम्पादक श्री विजय-शंकर मल्ल ने उनके व्यक्तित्व पर प्रकाश डालते हुए लिखा है कि -"वे खूब चैतन्य साहित्यकार हैं। युग-चेतना के प्रकाशन-योग्य नये मुहावरे और नई कलम के वे धनी लेखक हैं। भारतेन्दु-युग के लेखकों में उनका व्यक्तित्व अद्भुत है।"[2]

मिश्र जी के पत्रों में हमें उनके व्यक्तित्व की उपर्युक्त सभी विशेषताएं दृष्टिगत होती हैं। समकालीन साहित्यकारों के नाम लिखे गये उनके कुछ पत्र डा० शांतिप्रकाश वर्मा लिखित "प्रतापनारायण मिश्र की हिन्दी गद्य को देन" शोध-प्रबन्ध में संगृहीत हैं। बाबू बालमुकुन्द गुप्त के नाम लिखे गये उनके तीनचार पत्र "बालमुकुन्द गुप्त-स्मारक-ग्रंथ में उद्धृत हैं और "प्रेमघन" जी के नाम लिखा एक पत्र "प्रेमघन और उनका कृतित्व" शीर्षक प्रबन्ध में प्रकाशित हैं।

मिश्र जी भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के परम मित्र थे। बाबू राधाकृष्ण-दास को लिखे एक पत्र में उन्होंने "भारत दुर्दशा" शीर्षक नाटक खेलने के सम्बन्ध में भारतेन्दु जी से सम्मति मांगी है।[3] एक अन्य पत्र में

---

१ "प्रेमघन और उनका कृतित्व" (१९७६), परिशिष्ट-२, पृ० १७।
२ "प्रतापनारायण ग्रंथावली" भाग-१ (सं० २०१४), "वक्तव्य" से उद्धृत।
३ "प्रतापनारायण मिश्र की हिन्दी गद्य को देन" (१९७०), परिशिष्ट-४ पृ०- ४७९।

राधाकृष्णदास जी को अपने यहां पधारने का निमन्त्रण देते हुए लिखते हैं -" बुढ़वा मंगल पर बनेगा तो बिन बुलाये यार लोग हाजिर हैं पर इंशा अल्लाह कभी तो आप जानिब भी झोंपड़ी को रौनक बख्शने का कष्ट फर्मावें तुम्हारे ढंग का तो यह शहर नहीं पर दोचार के लिए तो पृथ्वी निरजीव नहीं है ।"[१]

पं०श्रीधर पाठक के नाम लिखे मिश्रजी के कुछ पत्र भी प्रकाशित हुए हैं । "प्रतापनारायण ग्रंथावली" के प्रथम पृष्ठ पर पाठक जी के नाम लिखा उनका एक कार्ड उनके हस्ताक्षरों के रूप में मुद्रित है ।[२] वे अधिकतर कार्ड ही लिखा करते थे । बाबू बालमुकुन्द गुप्त के नाम प्रेषित उनका ५ जनवरी १८९२ का पत्र उनके प्रेम, आन्तरिक स्वभाव तथा दिनचर्या की सुन्दर झांकी प्रस्तुत करता है । पत्र के कुछ अंश यहां हम उदाहरणस्वरूप उद्धृत करते हैं :-

" प्रियवरेषु ,

शुभमस्तु - सब आनन्द हैं, नित्योत्सवंहि वैतेषां नित्यश्री नित्य मंगलं । येषां हृदिस्थो भगवान् मंगलायतनो हरिः " ब्राह्मण स्वर्ग तो नहीं गया पर बांकीपुर खंगविलास प्रेस चला गया यह उसका सौभाग्य है । - - - - - भला कानपुर में आरे जो ? कहां होता है अस्मादेव कारणात्, कांग्रेस विषयेपि तदेव टांय टांय फिस- अवकाश दिन रात है, गुजारे का बन्दोबस्त पिताजी खुद ही कर गये हैं, ऊपर से दो घण्टे मात्र मिहनत पर एक अंग्रेज बहादुर पन्द्रह रुपया महीना भी देते हैं- निदान सब मजा है केवल शरीर गड़बड़ रहता है सो उसका नामही शरीर(फारसीवाला) है किन्तु डाक्टर भोलानाथ की जै हो उनकी दया से उसकी भी शरारत दबी ही रहती है ! - - - - - "[३]

---

१ - वही - , पृ० ४८० ।

२ देखिए:-"प्रतापनारायण ग्रंथावली" भाग-१ के प्रारम्भ में दी गयी मिश्र जी के पत्र की फोटो-प्रतिलिपि ।

३ "बालमुकुन्द गुप्त-स्मारक-ग्रंथ" (१९५०), संपा० झाबरमल्ल शर्मा, बनारसीदास चतुर्वेदी, पृ० ४९-५० ।

इससे प्रकट होता है मिश्र जी एक प्रतिभाशाली, विनोद-प्रिय और मनस्वी साहित्यकार थे । उनके पत्रों को पढ़ने पर डा० सुरेशचन्द्र शुक्ल का यह कथन सार्थक जान पड़ता है कि -" प्रतापनारायण जी विलक्षण प्रतिभा-सम्पन्न व्यक्ति थे । अधिक पढ़े-लिखे न होते हुए भी उन्होंने अपनी प्रतिभा के बल से जीवन में अद्वितीय सफलता प्राप्त की ।"[1] हिन्दी के उन्मुक्त पत्र-लेखकों में मिश्र जी का अग्रिम स्थान है ।

राधाकृष्णदास :-

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के फुफेरे भाई राधाकृष्णदास बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे । उन्होंने भारतेन्दुजी की स्मृति को चिरस्थायी बनाने के लिए समकालीन साहित्यकारों को जो पत्र लिखे हैं, वे साहित्यिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं । "भारतेन्दु-स्मारक" के सम्बन्ध में राधाचरण गोस्वामी को उन्होंने लिखा था-" बाबू हरिश्चन्द्र का स्मारक अवश्य होना चाहिए । मेरी बुद्धि में इसकी "कमिटी" अवश्य होनी चाहिए, और वह काशी में ही हो, जब वह कमिटी स्थिर हो जाय तब उसमें क्या स्मारक हो, यह विचार हो ।"[2]

इसी प्रकार भारतेन्दु जी की जीवनी लिखवाने के लिए भी उन्होंने पं० प्रतापनारायण मिश्र और बाबू बालमुकुन्द गुप्त से पत्र-व्यवहार किया था । गुप्त जी के नाम लिखे गये उनके पत्र "बालमुकुन्द गुप्त-स्मारक ग्रंथ"[3] में देखे जा सकते हैं । इन पत्रों से पता चलता है कि वे भारतेन्दु जी की कीर्ति-रक्षा के लिए सतत चिन्तित एवं प्रयत्नशील रहते थे ।

इन साहित्यकारों के अतिरिक्त पं० किशोरीलाल गोस्वामी, ठाकुर जगमोहन सिंह आदि के पत्र हमें "प्रेमघन और उनका कृतित्व" में

१" पं० प्रतापनारायण मिश्र : जीवन और साहित्य" (सं० २०२१ वि०) पृ० ३६ ।

२" भारतेन्दु की खड़ी बोली का भाषा-विश्लेषण" (सं० २०१८ वि०) डा० उषा माथुर, पृ० ४३ से उद्धृत ।

३ देखिए: "बालमुकुन्द गुप्त-स्मारक-ग्रंथ"), पृ० ५५-५७ ।

देखने को मिलते हैं । इस युग के कई साहित्यकारों के पत्र "भारतकलाभवन, बनारस में सुरक्षित हैं । यद्यपि द्विवेदी-युग तथा वर्तमान-युग की तुलना में विवेच्य युग का पत्र-साहित्य बहुत कम प्रकाशित हुआ है, परन्तु वस्तु और कला की दृष्टि से इसकी स्थिति क्षीण-हीन नहीं है । इस युग से सम्बन्धित बिखरी हुई पत्रसामग्री को एकत्र कर पुस्तकाकार प्रकाशित करने की महती आवश्यकता है ।

द्विवदी-युगीन पत्र-साहित्य :

आधुनिक हिन्दी-साहित्य के इतिहास में द्विवेदीयुग का अपना विशिष्ट स्थान है । डा० रामविलास शर्मा इसे हिन्दी नवजागरण का तीसरा चरण मानते हैं ।[१] डा० उदयभानु सिंह इसकी महत्ता प्रदर्शित करते हुए लिखते हैं-" आधुनिक हिन्दी साहित्य की मुख्य चार विशेषताएं हैं - पद्य में खड़ी बोली की प्रतिष्ठा, गद्य साहित्य का गौरव, विविध विषयक लोकोपयोगी वाङ्मय की सृष्टि और देश-देशान्तर में हिन्दी का प्रचार । इन सभी दृष्टियों से द्विवेदी-युग महत्तम है ।"[२]

जैसा कि हम देख चुके हैं, हिन्दी में पत्र-साहित्य की विधिवत् परम्परा का सूत्रपात द्विवेदी-युग में ही हुआ है । हिन्दी साहित्यकारों के पत्रों का स्वतंत्र संग्रह सर्वप्रथम "द्विवेदी-पत्रावली" के रूप में प्रकाशित हुआ । श्री बैजनाथ सिंह "विनोद" द्वारा सम्पादित " द्विवेदी-युग के साहित्यकारों के कुछ पत्र "शीर्षक संग्रह में भी आलोच्य युग के प्रमुख साहित्यकारों की मूल्यवान् पत्र-सामग्री संकलित है । इन दो स्वतंत्र पत्र-संग्रहों के अतिरिक्त आचार्य किशोरीदास वाजपेयीकृत "द्विवेदी जी और उनके संगी-साथी" शीर्षक संस्मरण में भी इस युग के अनेक प्रसिद्ध साहित्यकारों

१" महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिन्दी नवजागरण "(१९७७),पृ०१५ ।

"हिन्दी नवजागरण का तीसरा चरण महावीरप्रसाद द्विवेदी और उनके सहयोगियों का कार्यकाल है ।"

२"महावीरप्रसाद द्विवेदी और उनका युग"(सं० २००८ वि०)पृ० २६८ ।

के पत्र सप्रसंग उद्धृत किये गये हैं । इसके अतिरिक्त प्रेमचन्द, "निराला," प्रसाद" और "उग्र" से सम्बन्धित पत्र-संग्रहों में भी आलोच्य युग के साहित्यिकों के अनेक पत्र संकलित हैं । स्मृति एवं अभिनन्दन-ग्रंथों, जीवन-चरित्र-विषयक ग्रंथों तथा पत्र-पत्रिकाओं में आलोच्य युग का प्रचुर पत्र-साहित्य उपलब्ध होता है । इससे स्पष्ट होता है कि हिन्दी पत्र-साहित्य के इतिहास में आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी का युग सबसे महत्वपूर्ण है।

प्रमुख पत्र-लेखक :

द्विवेदी-युग के प्राय: सभी प्रसिद्ध साहित्यिकों के पत्र प्रकाशित हो चुके हैं । "द्विवेदी-युग के साहित्यकारों के कुछ पत्र" शीर्षक स्वतंत्र पत्र-संग्रह में विवेच्य युग के छह प्रसिद्ध साहित्यकारों-आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी, पं० पद्मसिंह शर्मा, पं० श्रीधर पाठक, पं० बालकृष्ण भट्ट , बाबू बालमुकुन्द गुप्त और आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के महत्वपूर्ण प्रकाशित हैं । परन्तु इनमें से आचार्य द्विवेदी और पं० पद्मसिंह शर्मा- ये दो ही ऐसे साहित्यकार हैं जिनका पत्र-साहित्य अत्यन्त विस्तृत है और इनके पत्रों का एक-एक स्वतंत्र संकलन भी प्रकाशित हो चुका है । यही नहीं , विषय और शैली की दृष्टि से भी इन साहित्यकारों के पत्र सर्वोच्चस्थान रखते हैं । अत: आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी और पं० पद्मसिंह शर्मा को ही विवेच्य युग के प्रमुख पत्र-लेखकों के रूप में स्थान देना समुचित जान पड़ता है ।

महावीरप्रसाद द्विवेदी :

महावीरप्रसाद द्विवेदी अपने युग के प्रथम आचार्य थे । उनका व्यक्तित्व सुधारवादी था । वे एक उत्तम गद्यकार और अच्छे पत्र-लेखक थे । "सरस्वती" के सम्पादक की हैसियत से उन्होंने हिन्दी के छोटे-बड़े साहित्यकारों को सैकड़ों पत्र लिखे हैं । वे अपने पत्र-व्यवहार में अत्यन्त नियमित एवं चुस्त थे । आंखों की बीमारी से पीड़ित होते हुए भी वे आवश्यक पत्रों का यथाशीघ्र उत्तर देते थे । पत्रों की सुरक्षा और उनके संग्रह के प्रति भी वे सजग थे । उनके नाम आये सैकड़ों पत्र नागरी प्रचारिणी सभा, काशी में सुरक्षित हैं जिनमें से कुछ महत्वपूर्ण पत्र "नागरी प्रचारिणी पत्रिका"

के "पौराणिकी" स्तम्भ के अन्तर्गत प्रकाशित भी हो चुके हैं । इस दृष्टि से उनके विस्तृत पत्र-साहित्य की अलग से चर्चा करना अभीष्ट है ।

पद्मसिंह शर्मा :

पं० पद्मसिंह शर्मा पत्र-लेखन कला में पारंगत थे । आचार्य द्विवेदी की तरह इनका पत्र-साहित्य भी अत्यन्त विशाल है । पं० बनारसीदास चतुर्वेदी तथा पं० हरिशंकर शर्मा के सम्पादकत्व में उनके पत्रों का एक स्वतंत्र संकलन "पद्मसिंह शर्मा के पत्र" शीर्षक से प्रकाशित हो चुका है । इसके अतिरिक्त समकालीन साहित्यकारों द्वारा उनको प्राप्त हुए पत्र "भारतीय साहित्य" के कई अंकों में "स्वर्गीय पद्मसिंह शर्मा का पत्रसंग्रह" शीर्षक से प्रकाशित हो चुके हैं । इस प्रकार आचार्य द्विवेदी के समान इनका पत्र-साहित्य भी पृथक् अध्ययन की अपेक्षा रखता है ।

अन्य पत्र-लेखक :-

द्विवेदी-युग के अन्य पत्र-लेखकों की सूची लम्बी है । अन्य पत्र-लेखकों के रूप में यहां हम कुछ ऐसे लेखकों की चर्चा करना चाहते हैं जिनके पत्र विविध ग्रंथों तथा पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हैं । इन पत्र-लेखकों के नाम है :- श्रीधर पाठक, बालमुकुन्द गुप्त, सैयद अमीर अली मीर, राजा राधिकारमण प्रसाद सिंह, मैथिली शरणगुप्त इत्यादि ।

श्रीधर पाठक :

श्रीधर पाठक द्विवेदी-युग के वरिष्ठ साहित्यकारों में से थे । श्री बैजनाथसिंह "विनोद" द्वारा सम्पादित "द्विवेदी-युग के साहित्यकारों के कुछ पत्र" शीर्षक संग्रह में उनके नौ पत्र संकलित हैं । इसके अतिरिक्त पं० बनारसीदास चतुर्वेदी लिखित "संस्मरण" और "श्रीधर पाठक तथा हिन्दी का पूर्व-स्वच्छन्दतावादी काव्य" शीर्षक प्रबन्ध की भूमिका में भी पाठक जी के पत्र प्रकाशित हैं ।

आचार्य द्विवेदी के नाम लिखे गये पत्रों में अधिकांशत: तत्कालीन लेखन-प्रणाली और व्याकरण-सम्बन्धी विवाद की चर्चा है । पाठक जी

द्विवेदी जी के परम मित्र थे । अपने पत्रों में वे द्विवेदी जी को "श्रद्धेयमित्र," "प्रिय सखे" आदि शब्दों से सम्बोधित करते थे, किन्तु वे द्विवेदी जी की नयी लेखन प्रणाली से सहमत नहीं थे । अपने २२-८-१९०५ के पत्र के अंत में उन्होंने अपना मंतव्य प्रकट करते हुए लिखा है कि -" मैं कोई नवीन प्रणाली निकालना नहीं चाहता, परन्तु शिष्ट और सूक्ष्म प्रथा का परम पक्षपाती हूं - मुझे राजा शिवप्रसाद, पं० राधाचरण गोस्वामी, लाला बालमुकुन्द गुप्त की लेख शैली बहुत रुचती है - और मुझे असीम प्रसन्नता हो यदि आप इन सुलेखकों का अनुसरण कर सकें ।"[1] इससे स्पष्ट होता है कि लेखन की नयी प्रणाली के सम्बन्ध में दोनों में काफी मतभेद था और इसीको लेकर दोनों के मध्य कुछ तनाव-सी स्थिति भी उत्पन्न हो गयी थी । परन्तु पाठक जी यह नहीं चाहते थे कि इस विवाद के कारण उनकी मित्रता को क्षति पहुंचे, इसलिए श्रावणी १९६१ वि० के पत्र में द्विवेदी जी से क्षमा-याचना करते हुए उन्होंने लिखा-" आप तो कुछ खफा से हो चले ।[2] मैं मुआफी मांगता हूं- मित्रों में विवाद उठना सचमुच अनुचित है -" इस प्रकार इन पत्रों का ऐतिहासिक महत्व है ।

पं० बनारसीदास चतुर्वेदी ने अपनी "संस्मरण" शीर्षक पुस्तक में पाठक जी के जो पत्र उद्धृत किये हैं, उनमें अधिकतर पत्र अंग्रेजी में लिखे हुए हैं । हिन्दी में लिखित दो-तीन चिट्ठियों में "भौत दिनतें दस्सन पस्सन नाय भये ।"[3] वाली चिट्ठी अत्यन्त प्रेमपूर्ण है । "श्रीधर पाठक तथा हिन्दी का पूर्व-स्वच्छन्दतावादी काव्य" प्रबन्ध की भूमिका में चतुर्वेदी जी ने पाठक जी के जो पत्र उद्धृत किये हैं उनमें पाठकजी द्वारा रामदास गौड़ के नाम लिखा गया एक पद्य-बद्ध पत्र भी है, किन्तु इन पत्रों में सबसे अधिक महत्वपूर्ण पत्र ९-३-१९२० का है । इस पत्र में पाठकजी ने जीवनी-साहित्य सम्बन्ध में अपना मत व्यक्त करते हुए लिखा है कि -

---

१ "द्विवेदी-युग के साहित्यकारों के कुछ पत्र" (१९५८), पृ० १९९ ।
२ - वही-, पृ० २०१ ।
३-"संस्मरण" (१९५२), पृ० २८ ।

"जीवनियों के सम्बन्ध में मेरा स्थिर मत यह है कि साहित्य में स्थान केवल उन्हीं जीवनियों को मिलना चाहिए जो साहित्यिक दृष्टि से रुचिर होने अतिरिक्त सच्चे लोकोपकार की क्षमता भी रखती हों।"[1] -- इस प्रकार पाठक जी के पत्रों में उनका प्रभावशाली, अध्ययनशील, ऋजु एवं आदर्शवादी व्यक्तित्व स्पष्ट रूप में झलकता है ।

बालमुकुन्द गुप्त :

बाबू बालमुकुन्द गुप्त हिन्दी के एक सफल गद्यकार एवं पत्रकार होने के साथ-साथ एक अच्छे पत्र-लेखक भी थे । आचार्य द्विवेदी के समान वे भी पत्र-व्यवहार में नियमित और चुस्त थे । पत्राचार के लिए वे अलग रजिस्टर रखते थे ।[2] श्री बैजनाथ सिंह "विनोद" द्वारा सम्पादित "द्विवेदी-युग के साहित्यकारों के कुछ पत्र" शीर्षक संग्रह में पं० श्रीधर पाठक के नाम गुप्त जी के १४ पत्र संकलित हैं । इसके अतिरिक्त श्री झाबरमल्ल शर्मा तथा बनारसीदास चतुर्वेदी द्वारा सम्पादित "बालमुकुन्द गुप्त-स्मारक-ग्रंथ" में भी उनके द्वारा प्रेषित तथा प्राप्त किये गये अनेक पत्र सन्दर्भ-सहित उद्धृत हैं ।

पं० श्रीधर पाठक के नाम लिखे गुप्त जी के पत्रों में सुदूर अतीत की अनेक जानने योग्य बातें हैं । तत्कालीन साहित्यिक चोरी और विवादों के अनेक सन्दर्भ-सूत्र इन पत्रों में मिलते हैं । ये पत्र गुप्त जी तथा पाठक जी के व्यक्तित्व पर भी महत्वपूर्ण प्रकाश डालते हैं । जैसे, १४ मार्च १९०० के पत्र में गुप्त जी ने लिखा है कि -" होली की बाबत आपका जैसा कुछ खयाल है सो ठीक ही है । परन्तु जैसी आपको उससे नफरत है वैसी ही उससे मुझे मुहब्बत है । --"[3] इसी प्रकार १७-९-१९०० के पत्र में पाठक जी के शंकाशील स्वभाव की ओर संकेत करते हुए उन्होंने लिखा है कि -"-- आपका जी इतना कच्चा है कि उसमें हरदम सन्देह उठते हैं और यही ख्याल हो जाता है कि सब दोष बालमुकुन्द करता है और जानबूझ कर करता है ।"[4] इस प्रकार इन पत्रों से जहां तत्कालीन साहित्यिक विवादों के सन्दर्भ प्राप्त होते हैं, वहां इन दोनों साहित्यकारों के स्वभाव, अभिरुचि आदि के सम्बन्ध में भी अच्छी जानकारी मिलती है ।

---

१ "श्रीधर पाठक तथा हिन्दी का पूर्व-स्वच्छन्दतावादी काव्य" (१९५९), डा० रामचन्द्र मिश्र, भूमिका, पृ० ४ ।

२ देखिए:- "बालमुकुन्द गुप्त-स्मारक-ग्रंथ" (१९५०), पृ० २४ ।

३ "द्विवेदी-युग के साहित्यकारों के कुछ पत्र" (१९५८) पृ० २०६ । ४-वही-पृ० २१० ।

"बालमुकुन्द गुप्त-स्मारक-ग्रंथ" में अन्य हिन्दी साहित्यकारों के अतिरिक्त आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी के नाम भी गुप्त जी के कुछ महत्वपूर्ण पत्र दिये गये हैं । इन पत्रों से पता चलता है कि "अनस्थिरता" विवाद से पहले इन दोनों साहित्यकारों के बीच घनिष्ठ सम्बन्ध था । द्विवेदी जी ने लाला सीताराम की काव्य-पुस्तक की कड़ी आलोचना "भारत-मित्र" में की थी । इस पर गुप्त जी ने द्विवेदी जी को लिखा था कि -" किसी अच्छे लेखक से कुछ भूल भी हो तो उस पर अधिक कटाक्ष न होने पावे ।"[1] इसके साथ ही २५-२-१९०० के पत्र में द्विवेदी जी के मत का स्वागत करते हुए उन्होंने लिखा था -

"स्थावर, स्थान, स्नेह आदि को पद्य के आदि में लाना हिन्दी भाषा में मैं तो गलती ही समझता हूं और मेरी समझ में उनके आने से वजन खराब हो जाता है । पर जब आप कहते हैं कि ठीक है तो ठीक ही है क्योंकि भूल वह होती है, जो भूल से लिखी जावे । जो बात मनुष्य जान-कर लिखे वह तो भूल नहीं , वह राय है ।"[2]

इससे स्पष्ट होता है कि गुप्त जी आचार्य द्विवेदी जी को कितने आदरभाव की दृष्टि से देखते थे । इन पत्रों के अतिरिक्त पं० अमृतलाल चक्रवर्ती तथा पं० भुवनेश्वर मिश्र के साथ हुए गुप्त जी के पत्र-व्यवहार की विस्तृत चर्चा डा० नत्थन सिंह ने अपनी "गद्यकार बाबू बालमुकुन्द गुप्त"[3] शीर्षक पुस्तक में की है । इस प्रकार द्विवेदी-युग के पत्र-लेखकों में गुप्तजी का पत्र-साहित्य अनेक दृष्टियों से महत्व रखता है । उनके द्वारा लिखे गये "शिवशम्भु के चिट्ठे" को हिन्दी-साहित्य में विशेष ख्याति मिली है, किन्तु ये वैयक्तिक पत्र नहीं है ।

सैयद अमीरअली मीर :

सैयद अमीर अली मीर द्विवेदी-युग के प्रसिद्ध एवं प्रतिभासम्पन्न साहित्यकार थे । पं० बनारसीदास चतुर्वेदी के नाम लिखे गये उनके पत्रों हमें उनकी साहित्य-साधना का अच्छा परिचय मिलता है । ये पत्र "सम्मेलन पत्रिका" में प्रकाशित हुए हैं । इन पत्रों में हिन्दू-मुसलमान-एकता ,हिन्दी

---

१ "बालमुकुन्द गुप्त-स्मारक-ग्रंथ" (१९५०) पृ० १२३ । २- वही-पृ० १२७
३ "देखिए: "गद्यकार बाबू बालमुकुन्द गुप्त" (१९५६), पृ० ४९-५० ।

और हिन्दुस्तानी-विवाद, हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की कार्य-पद्धति आदि अनेक महत्वपूर्ण विषयों पर चर्चा छेड़ी गयी है । इसके साथ मीर साहब के व्यक्तिगत जीवन की झलक भी मिलती है । आर्थिक संकट के कारण उनको एक रियासत की नौकरी का स्वीकार करना पड़ा और इसके कारण हिन्दी की सेवा में जो व्याघात पहुंचा, उसका संकेत हमें उनके इन शब्दों में मिलता है -" पंडित जी, एक पेन्शनर आदमी की तरह मैं हिन्दी-साहित्य-सेवा की ओर से उदासीन-सा हो गया हूं, इसका मुझे दु:ख है ।"[1] इस प्रकार मीर साहब के पत्रों में एक साहित्यानुरागी का दिल धड़कता है । मीर साहब के कुछ पत्र "काव्य सुधाधर" में भी प्रकाशित हुए हैं । इनमें कुछ पत्र पद्य में लिखे गये हैं ।[2] अत: इन पत्रों का अपना अलग महत्व है ।

राजा राधिकारमण प्रसाद सिंह :

राजा राधिकारमण प्रसाद सिंह द्विवेदी-युग के लब्धकीर्ति कथाकार थे । आचार्य काका कालेलकर उनको "राष्ट्रीय साहित्य के शैलीकार" मानते हैं ।[3] राजा साहब अनूठे पत्र-लेखक भी थे । डा० गोपाल प्रसाद वंशी ने मई १९६५ ई० की "रसवन्ती" में "राजा साहब के अनूठे पत्र" शीर्षक से जो पत्र प्रकाशित किये हैं उनमें हमें राजा साहब के शील-सौंदर्य की स्पष्ट झलक मिलती है । ये पत्र अब "राजा राधिकारमण प्रसादसिंह अभिनन्दन-ग्रंथ" में संकलित हैं । ये पत्र कार्ड के रूप में ही हैं, परन्तु कवित्व मय हैं । प्रत्येक पत्र में उर्दू का कोई-न-कोई अनूठा शेर उद्धृत किया गया है जैसे -

" प्रियवर ,

आपने सुना होगा -

खुशी महसूस करता हूं, न गम महसूस करता हूं ,
मैं जिस आलम में हूं, तेरा करम महसूस करता हूं ।

बस यही हाल है । अपना सब कुछ लूट-छिन गया ।"[4]

---

१ "सम्मेलन पत्रिका", भाग-४९, सं ३-४, पृ० १०६ ।

२ देखिए:- "काव्य-सुधाधर, "पंचमवर्ष", सन् १९०२-१९०३, पृ० ७ ।

"जाने महि नभराशिरवी, बिरचे सो करतार ।
काव्य सुधाधर को करे सुयश जगत परचार ।।"

३ "राजा राधिकारमण प्रसादसिंह अभिनन्दन-ग्रंथ" (१९६९), पृ०८० ।

४ "रसवन्ती," मई १९६५, पृ० ३९ ।

राजा साहब द्वारा डा० वासुदेवनन्दन प्रसाद को लिखे गये ३४ पत्र उनके उक्त अभिनन्दन-ग्रंथ में प्रकाशित हैं । इन पत्रों में भी हमें उनके दर्दे-दिल की धड़कनें स्पष्टत: सुनाई देती हैं । १-३-१९६४ के पत्र का यह अंश देखिए-

"मेरी जिन्दगी की झोली में तो अब होली है न दीवाली-जब थी, तब थी । हां, आपकी होली है, आपकी खुशहाली-जिनकी जवानी, उनका जमाना । हां,

जिनदिन देखे वे कुसम, गई सु बीति बहार ।
अब रही अलि गुलाब में, अपत कटीली डार ।।

- ॥ -

शमा बुझ कर रह गई- परवाना जलकर रह गया ।
याद आये हुश्न-इश्क-एक दाग दिल पर रह गया ।[१]

इन उद्धरणों से स्पष्ट है कि राजा साहब एक कुशल पत्र-लेखक थे । उनके पत्र हमारे साहित्य की संपत्ति हैं ।

मैथिलीशरण गुप्त :

मैथिलीशरण गुप्त भारतीय संस्कृति के आख्याता और राष्ट्रीय-चेतना के अग्रदूत थे । आचार्य द्विवेदी, पं० पद्मसिंह शर्मा, बाबू बालमुकुन्द गुप्त आदि के समान वे भी आवश्यक पत्रों का अविलम्ब उत्तर देते थे । उनके कई महत्वपूर्ण पत्र "राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त अभिनन्दन-ग्रंथ" में प्रकाशित हुए हैं । इसके अतिरिक्त "उग्र" जी के नाम लिखे उनके तीन पत्र "फाइल और प्रोफाइल" में, "प्रसाद" जी के नाम लिखे लगभग २५ पत्र "प्रसाद के नाम पत्र" में और विश्वम्भर "मानव" को लिखे १४ पत्र "सम्मेलन पत्रिका" में प्रकाशित हैं ।

गुप्त जी अधिकतर कार्ड ही लिखते थे जिन पर शीर्षक के रूप में "श्रीराम" शब्द अंकित रहते थे । उनके अभिनन्दन-ग्रंथ में संकलित पत्रों में श्री राय कृष्णदास के नाम लिखे पत्र अधिक आत्मीयतापूर्ण, रोचक एवं मधुर हैं । दिनांक १२-२-१९१२ के पत्र की प्रारम्भिक पंक्तियां यहां हम उद्धृत करते हैं -

"प्रिय राय साहब ,

जय जानकी जीवन । कृपा कार्ड प्राप्त हुआ ।

---

१ "राजा राधिकारमण प्रसादसिंह अभिनन्दन-ग्रंथ" (१९६९), खण्ड-२, पृ० ८।

खुशी हुई । भला "राष्ट्रकवि" की योग्यता मुझमें कहां ! मुझे तो आप लोगों का "गुप्तजी" ही रहना बहुत है ।

"मुझे आपका यही भाव है शुभफल सारा ।
कि है मैथिलीशरण गुप्त भी एक हमारा ।।"[1]

इन पंक्तियों में राष्ट्रकवि की नम्रता, सरलता, भावुकता, आत्मीयता आदि अनेक चारित्रिक विशेषताएं प्रतिबिम्बित हैं ।

"उग्र" जी के नाम लिखे पत्रों में हमें गुप्त जी की उदारता एवं निर्भीकता के दर्शन होते हैं । उन्होंने "उग्र" जी की लेखनी की खुलकर तारीफ़ की है -" आपकी लेखनी सबल है, इसका तो कुछ कहना ही नहीं, भले ही किसी की रुचि अथवा संस्कार भिन्न प्रकार के हों ।"[2] "प्रसाद" जी के नाम उनके पत्रों में हमें दोनों महाकवियों के स्नेहिल सम्बन्ध का सुन्दर परिचय मिलता है । एकपत्र में वे लिखते हैं-"- - - अभी तो काशी आने का कोई विचार नहीं । जब आऊंगा, आपको पकड़ूंगा ही ।आशा है, समाधि निर्विघ्न जमती होगी ।"[3] "मानव" जी के नाम प्रेषित पत्रों में हमें उनकी सहृदता और वर्तमान युग के विषाम व्यवहार के प्रति खिन्नता स्पष्टरूप से देखने को मिलती है । इस सम्बन्ध में उनके १९-३-१९६९ के पत्र की यह उक्ति द्रष्टव्य है-" आज हाथ जोड़ना, कल लात मारने में भी भले मानुसों को कुछ नहीं लगता ।"[4] इस प्रकार राष्ट्रकवि के इन पत्रों में सर्वत्र उनका सरल-निश्छल हृदय धड़कता है । ये पत्र हमारे राष्ट्र की धरोहर के समान हैं ।

द्विवेदी-युग के इन लेखकों के अतिरिक्त मुंशी अजमेरी, रामचन्द्र शुक्ल, बाबू गुलाब राय, पं० रामनरेश त्रिपाठी आदि अनेक साहित्यकारों के पत्र विविध ग्रंथों और पत्र-पत्रिकाओं में उपलब्ध होते हैं । उपर्युक्त लेखकों के पत्र-साहित्य के अध्ययन से ज्ञात होता है कि वे पत्रोत्तर, पत्र-सुरक्षा और पत्र-संग्रह की ओर अधिक सतर्क थे । विश्वम्भर "मानव" ने गुप्त जी के पत्रों की विशेषताओं का उल्लेख करते हुए हिन्दी के तथाकथित बड़े लेखकों के बारे में लिखा है कि -"हिन्दी में कई लेखक ऐसे भी हैं जो

---

१ "राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त अभिनन्दन-ग्रंथ" (१९५९), पृ० ३३० ।
२ "फाइल और प्रोफाइल" (१९७०), पृ० २९१ ।
३ "प्रसाद के नाम पत्र" (१९७६), पृ० ८५ । ४-"लेखकों के पत्र" (लेख), सम्मेलन पत्रिका, भाग-६२, सं०३-४, पृ०-३७ ।

जो आवश्यक पत्रों का उत्तर देना भी अपनी प्रतिष्ठा के विरुद्ध मानते हैं ।[१]

द्विवेदी-युग का विपुल पत्र-साहित्य प्रकाश में आ सका तो उसका एक कारण यह भी है कि इस युग के पत्र-लेखक आवश्यक पत्रों का अविलम्ब उत्तर देते थे । पत्र-साहित्य के विकास के लिए यह भी जरूरी बात है । पश्चिम के महान् पत्र-लेखकों में भी हमें इसी विशेषता के दर्शन होते हैं । प्रथम अध्याय में हम देख चुके हैं कि महान् साहित्यकार लियो टाल्सटाय ने रोमां रोलां जैसे मामूली विद्यार्थी के पत्र का उत्तर ३८ पृष्ठों में लिख भेजा था । सुप्रसिद्ध मनोविद् सायमण्ड फ्रोड (Sigmund Freud) के पुत्र ने अपने पिता के विशाल पत्र-साहित्य की चर्चा में इसी बात पर बल दिया है कि वे प्रत्येक पत्र का नियमानुसार २४ घण्टे में उत्तर दे देते थे ।[२] पाश्चात्य पत्र-साहित्य के विकास और समृद्धि में यह भी एक उल्लेखनीय तथ्य है ।

इस युग के पत्र-साहित्य की दूसरी महत्वपूर्ण विशेषता भावों की निश्छल अभिव्यक्ति है । इस युग के पत्र-लेखक बिना किसी आडम्बर और मिथ्याभिमान के पत्र लिखते थे । विषय और शैली की दृष्टि से भी इस युग का पत्र-साहित्य श्रेष्ठ स्थान का अधिकारी है । हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ पत्र-लेखक पं० पद्मसिंह शर्मा इसी युग की विभूति हैं ।

वर्तमान-युगीन पत्र-साहित्य :

हिन्दी साहित्य में वर्तमान-युग का आरम्भ छायावाद-काल से माना जाता है । इस काल के साहित्यकारों ने मानव-जीवन का कल्पना सौंदर्य-चेतना, प्रकृति तथा समाज से जो सम्बन्ध स्थापित किया, वह हिन्दी के लिए अभूतपूर्व था । दूसरी साहित्येतर क्षेत्र में भी नवीनता और

---

१ - वही-, पृ० ३४ ।

२ - " Letters of Sigmund Freud " Preface.

Polite

" As a letter_writer my Father was unusually politic and conscientious. He dealt with his Voluminous correspondence unassisted and in long-hand. He answered every letter he recieved, no matter from whom and as a rule this answer was in the post within twenty-four hours."

परिवर्तनशीलता के लक्षण इसी काल-खण्ड में दृष्टिगत होते हैं । राजनैतिक क्षेत्र में महात्मा गांधी का प्रभाव सर्वत्र छा गया था । गांधी-युग का आरम्भ भी लगभग छायावाद-युग के साथ ही होता है । डा० - सिस्टर क्लेमेंट मेरी ने भी अपने "हिन्दी का स्वातंत्र्योत्तर विचारात्मक गद्य" शीर्षक शोध-प्रबन्ध में वैचारिक साहित्य के चार सोपानों के उल्लेख में छायावादीयुग को "गांधी-युग" के समानतर रखा है ।[१] इस दृष्टि से वर्तमान-युग के पत्र-साहित्य में साहित्य और साहित्येतर दोनों के पत्र-लेखकों का समावेश होता है ।

प्रमुख पत्र-लेखक :

आलोच्य युग के प्रमुख पत्र-लेखकों को उनके क्षेत्र की दृष्टि से दो विभागों में बांटा जा सकता है - (१) साहित्यिक क्षेत्र के प्रमुख पत्र-लेखक और (२) साहित्येतर क्षेत्रों के प्रमुख पत्र-लेखक । यहां पहले हम साहित्यिक क्षेत्र के प्रमुख पत्र-लेखकों का संक्षिप्त परिचय प्राप्त करेंगे ।

साहित्यिक क्षेत्र के प्रमुख पत्र-लेखक :

साहित्यिक क्षेत्र के प्रमुख पत्र-लेखकों में कालक्रम के अनुसार जिन लेखकों के नाम उल्लेखनीय हैं, वे हैं- प्रेमचन्द, बनारसीदास चतुर्वेदी, सूर्यकान्त त्रिपाठी "निराला", सुमित्रानन्दन पन्त, यशपाल, डा० वासुदेवशरण अग्रवाल, बाबू वृन्दावनदास, और हरिवंशराय "बच्चन" । इन सभी लेखकों के पत्र स्वतंत्र संकलन के रूप में प्रकाशित हो चुके हैं । विविध ग्रंथों तथा पत्र-पत्रिकाओं में भी इनके अनेक महत्वपूर्ण पत्र उपलब्ध होते हैं । इन सभी लेखकों के पत्र-साहित्य का विस्तार से अनुशीलन हम अलग अध्याय में करेंगे । यहां उनके पत्र-साहित्य का संक्षिप्त परिचय ही दे रहे हैं ।

प्रेमचन्द :

प्रेमचन्द जी वर्तमान-युग के श्रेष्ठ कथा-लेखक तो थे ही, एक उत्तम पत्र-लेखक भी थे । जिस प्रकार आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी और पं० पद्मसिंह शर्मा ने अपने पत्रकार जीवन में सहस्रों पत्र लिखे और पाये, उसी प्रकार प्रेमचन्द जी को भी सुदीर्घ पत्रकारिता और साहित्यिक यात्रा में

---

१ "हिन्दी का स्वातंत्र्योत्तर विचारात्मक गद्य" (प्र०सं०), पृ० ६-७ ।

सहस्रों पत्र लिखने पड़े हैं । जैसा कि हम देख चुके हैं, अमृतराय और मदनगोपाल के सम्पादकत्व में उनके पत्रों के दो संकलन स्वतंत्र रूप से प्रकाशित हो चुके हैं । उन पर लिखे गये जीवन-ग्रंथों, आलोचना-ग्रंथों, शोध-प्रबन्धों आदि में भी उनके महत्वपूर्ण प्रकाशित हुए हैं । इस प्रकार उनका पत्र-साहित्य अत्यन्त विशाल है ।

बनारसीदास चतुर्वेदी :

पं० बनारसीदास चतुर्वेदी पत्र-साहित्य के मर्मज्ञ विद्वान् और महान् पत्र-लेखक हैं । हिन्दी साहित्य में सबसे अधिक पत्र लिखने और पाने में चतुर्वेदी जी का स्थान सर्वोपरि है । हिन्दी साहित्यकारों के पत्रों को सर्वाधिक संख्या में प्रकाशित करने का श्रेय भी उन्हीं को है । पत्र-व्यवहार उनका प्रिय व्यसन रहा है । पत्रों की सुरक्षा और उनके संग्रह में वे अपने साहित्यिक जीवन के प्रारम्भ से ही सजग रहे हैं । उनके निजीसंग्रहालय में देश-विदेश के महान् साहित्यकारों के अनेक मूल्यवान पत्र सुरक्षित हैं । उनके पत्रों का एक स्वतंत्र संग्रह "डा० बनारसीदास चतुर्वेदी के पत्र" शीर्षक से प्रकाशित हुआ है । इसके अतिरिक्त उनके अभिनन्दन-ग्रंथ तथा अन्य ग्रंथों एवं पत्र-पत्रिकाओं में भी उनके उत्प्रेरक पत्र प्राप्त होते हैं । इस प्रकार उनके पत्र-साहित्य का हिन्दी-पत्र साहित्य में सर्वाधिक महत्व है।

सूर्यकान्त त्रिपाठी "निराला" :

छायावाद के प्रवर्तकों में सूर्यकान्त त्रिपाठी "निराला" का अन्यतम स्थान है । उनका व्यक्तित्व विशिष्ट था । अस्था, निष्ठा, चिन्तन की स्वतंत्रता और ओजस्विता उनके व्यक्तित्व की प्रमुख विशेषताएँ हैं । ये सभी विशेषतायें हमें उनके पत्र-साहित्य में उपलब्ध होती हैं । उनका विस्तृत पत्र-साहित्य डा० रामविलास शर्मा द्वारा सम्पादित "निराला की साहित्य-साधना भाग-३" में संकलित है । हिन्दी का यह अद्वितीय पत्र-संग्रह है ।

सुमित्रानन्दन पन्त :

कविवर सुमित्रानन्दन पंत आधुनिक हिन्दी साहित्य के प्रमुख

आलोक-स्तम्भ हैं । उनके काव्य-साहित्य के समान उनका पत्र-साहित्य भी सरस और सुन्दर है । बच्चन जी के नाम लिखे उनके पत्रों के दो स्वतंत्र संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं । इसके अतिरिक्त प्रसादजी और निराला जी से सम्बन्धित पत्र-संग्रहों में भी उनके अनेक बहुमूल्य पत्र संकलित हैं । इस प्रकार पन्त जी का पत्र-साहित्य उनके व्यक्तित्व तथा युग-परिवेश के अध्ययन के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है ।

यशपाल :

यशपाल जी प्रेमचन्द जी की परम्परा के हिन्दी कथा-लेखक हैं । प्रेमचन्दजी की तरह उन्होंने भी अनेक पत्र लिखे हैं । यद्यपि स्वतंत्र संग्रह के रूप में उनके पत्र-साहित्य पर एक ही पुस्तक उपलब्ध होती है, किन्तु अनेक शोध-प्रबन्धों, आलोचना-ग्रंथों और पत्र-पत्रिकाओं में उनका विस्तृत पत्र-साहित्य प्रकाशित हुआ है । ये पत्र उनके कथाकार को समझने तथा उनके बहुमुखी व्यक्तित्व की पहचान में हमारी पर्याप्त सहायता करते हैं ।

डा० वासुदेवशरण अग्रवाल :

जनपदीय आन्दोलन के प्रवर्तक और भारतीय संस्कृति के अन्यतम व्याख्याता डा० वासुदेवशरण अग्रवाल को पत्र-लेखन में गहरी दिलचस्पी थी । उन्होंने श्रीकृष्णानन्द गुप्त, अगरचन्द नाहटा, पं० बनारसीदास चतुर्वेदी, डा० सत्येन्द्र आदि अनेक हिन्दी साहित्यकारों के नाम मूल्यवान पत्र लिखे हैं । उनके पत्रों का एक विशाल स्वतंत्र संकलन बाबू वृन्दावनदास ने "डा० वासुदेवशरण अग्रवाल के पत्र" शीर्षक से प्रकाशित कराया है । इसके अतिरिक्त अन्य ग्रंथों और पत्रिकाओं में उनके अनेक पत्र उपलब्ध होते हैं । डा० अग्रवाल के पत्र जनपदीय आंदोलन के विश्वकोश हैं ।

बाबू वृन्दावनदास :

बाबू वृन्दावनदास पत्र-विधा के उन्नायकों में से हैं । उन्होंने पं० बनारसीदास चतुर्वेदी और डा० वासुदेवशरण अग्रवाल के पत्र, पुस्तकाकार प्रकाशित कर पत्र-साहित्य की समृद्धि और श्री वृद्धि में अन्यतम सहयोग दिया है । वे स्वयं भी अच्छे पत्र-लेखक हैं । उनका सम्पर्क-क्षेत्र

विशाल है । श्रीरमण शांडिल्य ने उनकी पत्र-राशि को एकत्रित कर एक स्वतंत्र संग्रह के रूप में प्रकाशित किया है । इसके अतिरिक्त "उत्तर-विहार," भारत-सावित्री" आदि उनके पत्र-पत्रिकाओं में उनके पत्र मिलते हैं

हरिवंशराय "बच्चन":

बच्चन जी एक लोकप्रिय कवि और सशक्त गद्यकार होने के साथ-साथ एक उच्चकोटि के पत्र-लेखक भी हैं । आधुनिक साहित्यकारों एवं पत्र-लेखकों में उनका महत्वपूर्ण स्थान है । वे आवश्यक पत्रों का अविलम्ब उत्तर देते हैं । उन्होंने पंतजी के पत्रों को दो स्वतंत्र संकलनों में प्रकाशित कर हिन्दी पत्र-साहित्य के विकास में अपूर्व योग दिया है । डा० जीवन प्रकाश जोशी और निरंकारदेव सेवक ने उनके पत्रों को पुस्तकाकार प्रकाशित कर हिन्दी को मूल्यवान पत्र-साहित्य भेंट किया है।

साहित्येतर क्षेत्रों के प्रमुख पत्र-लेखक :

वर्तमान युग के साहित्येतर क्षेत्र के प्रमुख पत्र-लेखकों में महात्मा-गांधी, सेठ जमनालाल बजाज और आचार्य विनोबा भावे के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं । इन लेखकों के पत्रों का राजनैतिक तथा सांस्कृतिक दृष्टियों से बहुत बड़ा महत्व है । महात्मा जी तथा सेठ जी के पत्र कई खण्डों में प्रकाशित हो चुके हैं । आचार्य विनोबाजी के पत्रों का एक स्वतंत्र संकलन प्राप्त होता है । अतः इन लेखकों के पत्र-साहित्य पर विस्तार से विचार हम अगले अध्याय में करेंगे । यहां इनके पत्र-साहित्य पर किंचित् प्रकाश डाला जाता है ।

महात्मा गांधी :

जीवन में जितना पत्र-व्यवहार महात्मा गांधी को करना पड़ा, उतना शायद ही किसीको करना पड़ा होगा । डायरी-साहित्य के विकास की तरह पत्र-साहित्य विकास में भी महात्मा जी का अनन्ययोग मिला है । उनके दैनिक कार्यक्रम में पत्र-व्यवहार के लिए निश्चित समय होता था । उनके सहस्रों पत्र "गांधी-स्मारकनिधि" के अन्तर्गत एकत्र किये गये हैं । नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद की ओर से "बापू के पत्र"

शीर्षक से अनेक पत्र-संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं । विश्व के महान् पत्र-लेखकों में उनकी गिनती की जाती है ।

सेठ जमनालाल बजाज :

सेठ जमनालाल बजाज हमारे स्वाधीनता-संग्राम के महान् सेनानी थे । महात्मा गांधी को उन्होंने अपना जीवन समर्पित कर दिया था । आज़ादी की लड़ाई में बापू के सम्पर्क में आने के बाद सेठजी को देश के राजनैतिक, सामाजिक और रचनात्मक कार्यकर्ताओं के साथ विस्तृत पत्र-व्यवहार करना पड़ा । उनका पत्र-व्यवहार आठ खण्डों में सस्ता साहित्य मंडल, दिल्ली से प्रकाशित हुआ है । वे एक कुशल पत्र-लेखक थे ।

आचार्य विनोबा भावे :

आचार्य विनोबा जी महात्मा गांधी के आध्यात्मिक उत्तराधिकारी हैं । महात्मा जी के समान उनका भी बजाज-परिवार से घनिष्ठ सम्पर्क है । बजाज-परिवार के नाम लिखे उनके पत्रों का एक स्वतंत्र संग्रह सस्तासाहित्य मंडल, दिल्ली की ओर से प्रकाशित हो चुका है । पं० वियोगी हरि द्वारा सम्पादित "बड़ों के प्रेरणादायक कुछ पत्र" शीर्षक संग्रह में भी उनके कुछ प्रेरणाप्रद पत्र संकलित हैं । उनके पत्रों में हमें उनके संत-स्वभाव एवं आध्यात्मिक चिन्तन की स्पष्ट झलक मिलती है । भाषा-शैली की दृष्टि से भी उनके पत्र मधुर और मोहक हैं ।

अन्य पत्र-लेखक :

वर्तमान युग के प्रमुख पत्र-लेखकों के समान अन्य पत्र-लेखकों को भी दो श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है-(१) साहित्यिक क्षेत्र के पत्र-लेखक और (२) साहित्येतर क्षेत्रों के पत्र-लेखक । सर्वप्रथम यहां हम साहित्यिक क्षेत्र के पत्र-लेखकों पर विचार करेंगे ।

साहित्यिक क्षेत्र के अन्य पत्र-लेखक :

वर्तमान युग में साहित्यिक क्षेत्र के प्राय: सभी प्रसिद्ध लेखकों के पत्र विविध ग्रंथों और पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं । यहां हम कुछ महत्वपूर्ण लेखकों के पत्र-साहित्य का अवलोकन करेंगे ।

माखनलाल चतुर्वेदी :

माखनलाल चतुर्वेदी एक तप: पूत साहित्य-साधक थे । वे जितने सफल कवि थे, उतने ही सफल पत्रकार और पत्रलेखक थे । उन्होंने न जाने कितने कवियों और लेखकों को अपने पत्रों से प्रेरित और प्रोत्साहित किया होगा । उनके बहुमूल्य पत्र- यत्र-तत्र बिखरे पड़े हैं । वे छोटे-बड़े सभी लेखकों के पत्रों का यथाशीघ्र उत्तर देते थे । श्री सोमचन्द्र "सुमन" ने अपनी "अंजलि" शीर्षक कविता-पुस्तक उनको भूमिका लिखने के लिए भेजी थी । इसके उत्तर में उन्होंने "सुमन" जी को जो पत्र लिखा है, वह उनके व्यक्तित्व के कई महत्वपूर्ण पहलुओं को उजागर करता है । इस पत्र का प्रारम्भिक अंश इस प्रकार है -

"प्यारे सोमचन्द्र जी,

सादर नमन ।

क्षमा कीजिए आपने भूमिका लिखने के लिए अच्छा आदमी नहीं चुना । आप मेरी बीमार देह, मजदूर जिन्दगी और कठिनाइयों से परिचित न होंगे, नहीं तो कदाचित् यह भूल आप न करते । खैर - - दो शब्द लिख दिये - - -" और अंत में उन्होंने लिखा है-"मैंने जीवन में याद नहीं आता कि आपको कभी देखा है । पहचान होती तो चिट्ठी जरा लम्बी लिखता और उसमें कुछ अधिक उटपटांग लिखता ।"[1]

इससे स्पष्ट होता है कि पं० माखनलाल चतुर्वेदी अपने मित्रों और परिचितों को दिल खोलकर पत्र लिखते थे । उदाहरण के लिए पं० बनारसीदास चतुर्वेदी के नाम लिखे २-४-१९४१ के पत्र का निम्नांकित अंश देखिए-

"मेरे पत्र न देने का कारण, मेरी नाराजी के सिवा क्या कोई नहीं होता ? मेरी कपाल रेखाओं में संकट भी तो किसी रेखा का नाम हो सकता है । बढ़ते खून में वह रेखा घटी रहती थी, घटते खून में वह बढ़ने का उपद्रव क्यों न करें ?"[2]

१" एक व्यक्ति : एक संस्था" (१९६६), पृ० ५४७-४८ ।

२" सम्मेलन पत्रिका," भाग-५६, सं० २-३, पृ० ३९-४० ।

"रसवन्ती" के "माखनलाल चतुर्वेदी-अंक" में चतुर्वेदी के अनेक रोचक पत्र प्रकाशित हुए हैं । श्री नर्मदाप्रसाद खरे के नाम प्रेषित एक पत्र में हमें उनके जीवन-दर्शन का सुन्दर परिचय मिलता है । इस पत्र का एक अंश इस प्रकार है -" प्रसन्न रहो, इतने कि चहकती चिड़ियां, महकती कलियां और झरनों की बहती धाराएं सकुचा जायें । किन्तु संयत रहो इतने कि तुम्हारी ध्वनि धारा में से चुननेवालों को विष-बिन्दु, विकार-बिन्दु और विद्वेष-बिन्दु न मिलें, उस ध्वनि-धारा में अश्रु-बिन्दु, श्रम-बिन्दु और रक्त-बिन्दु की त्रिवेणी में मज्जन करना नसीब हो ।"[1]

इन पत्रों को पढ़कर हमें डा० प्रेमशंकर लिखित "माखनलाल चतुर्वेदी का गद्य" शीर्षक निबन्ध के इन शब्दों का स्मरण हो जाता है कि- "उन्हें एक शब्द-शिल्पी भी कहा जा सकता है जो प्रत्येक शब्द के परिवेश को जानता हुआ उसका सार्थक प्रयोग करता है और प्रतिभा से मिलाकर उसे एक सहज रूप देता है ।"[2]

इन पत्रों के अतिरिक्त पं० माखनलाल चतुर्वेदी द्वारा श्रीरामनाथ "सुमन" को लिखे कुछ पत्र "छायावादयुगीन स्मृतियां"[3] में भी उद्धृत हैं । ये पत्र उनके कलात्मक व्यक्तित्व के परिचायक हैं । इन सभी पत्रों को संगृहीत कर पुस्तकाकार प्रकाशित करने से हिन्दी पत्र-साहित्य की श्रीवृद्धि होगी ।

जयशंकर "प्रसाद":

जयशंकर "प्रसाद" एक मनीषी कवि थे । वे प्रकृति से अध्ययनशील और एकांतप्रिय व्यक्ति थे । यात्रा और पत्र-व्यवहार से वे प्राय: दूर रहा करते थे । इस सम्बन्ध में उनके अंतरंग मित्र श्री विनोदशंकर व्यास ने लिखा है-" प्रसाद जी पत्र-व्यवहार से बहुत हिचकते थे । कुछ विशेष ~~व्यक्ति~~-व्यक्तियों को छोड़कर बहुत कम लोग ऐसे होंगे जिन्हें प्रसाद जी की लेखनी

---

१ " सम्मेलन पत्रिका," भाग-५६, सं०-२-३, पृ० ३९-४०-।

१ "रसवन्ती", अक्टूबर १९६८, पृ० ६९-७० ।

२ " माखनलाल चतुर्वेदी : यात्रा-पुरुष" (१९६९), संपा० श्रीकांत जोशी, पृ० ५०५

३ "देखिए: "छायावादयुगीन स्मृतियां" (१९७५), पृ० ७६ ।

से उत्तर मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है । उनकी रचनाएं सम्पादकों के पास मैं ही भेजा करता था । इसका तात्पर्य यह नहीं कि वह अपनी लेखनी को विशेष महत्व देते थे अथवा अभिमान के कारण ऐसा करते थे । वास्तव में बात यह थी कि कोई उनके पत्रों का दुरुपयोग न करें ।"[1] यही कारण है कि "प्रसाद" जी के नाम आये पत्र तो स्वतंत्र संग्रह के रूप में प्रकाशित हो गये, परन्तु उनके पत्रों का कोई संग्रह अभी तक देखने में नहीं आया ।

महाकवि "निराला" के नाम लिखे "प्रसाद" जी के कुछ पत्र हमें डा० रामविलास शर्मा द्वारा सम्पादित "निराला की साहित्य साधना भाग-३" में उपलब्ध होते हैं । ये पत्र अत्यन्त छोटे हैं किन्तु आत्मीयतापूर्ण हैं । इन पत्रों से ज्ञात होता है कि प्रसाद जी "निराला" जी के स्वास्थ्य के लिए कितने चिन्तित रहते थे । १२-८-१९२७ के पत्र में उन्होंने लिखा है-"प्रिय "निराला" जी, बहुत दिनों के बाद आपका पत्र मिला । यह जानकर प्रसन्नता हुई कि अब आपका स्वास्थ्य सुधर रहा है । परन्तु अभी बहुत सावधान रहने की आवश्यकता है । औषधि की आवश्यकता हो तो लिखिएगा । मैं समझता हूं कि रोग जबतक निर्मूल न हो तब तक उसका सेवन करते रहिए । मैं सकुशल हूं, अपना कुशल समाचार बराबर लिखते रहिए ।"[2]

~~निस्सम~~ श्री रमाशंकर "चंचल" ने भारतकला भवन, बनारस में संगृहीत "प्रसाद" जी के कुछ पत्रों की चर्चा अपने "प्रसाद" के कुछ पत्र "शीर्षक लेख में की है । ये सभी पत्र संक्षिप्त हैं, किन्तु उनका विषय बड़ा व्यापक है, या यों भी कह सकते हैं कि ये पत्र "प्रसाद" जी के व्यस्त जीवन की झांकी है । कुछ पत्रों में ऐतिहासिक विषय की चर्चा भी मिलती है । जैसे, "प्रियवर, चौलुक्य शब्द पुलकेशिन के लिए आया होगा । स्मिथ को देख लीजिएगा । सम्भवत: पुलकेशिन चालुक्य के वंश का था, फिर से देख लीजिए ।"[3] इस प्रकार "प्रसाद" जी, बड़ी संयत और स्पष्टभाषा में संक्षिप्त पत्र लिखते थे ।

---

१ "प्रसाद और उनका साहित्य" (१९५६), पृ० २४

२ "निराला की साहित्य-साधना" भाग-३, (१९७६), पृ० ९६ ।

३ "प्रसाद के कुछ पत्र" (लेख), "हिन्दुस्तानी", जुलाई-सितम्बर १९७१, पृ० १०५ ।

शिव पूजन सहाय :

बहुमुखी प्रतिभा के धनी आचार्य शिवपूजन सहाय को पत्र-लेखन कला में भी पूर्ण प्रावीण्य प्राप्त था । उनके पास हिन्दी के अनेक सुप्रसिद्ध साहित्यकारों के पत्रों का भण्डार भरा था, परंतु उसके ऊपर एक चोर ने हाथ साफ़ कर दिया । वे पत्र-व्यवहार में अत्यन्त नियमित थे । पं० बनारसीदास चतुर्वेदी द्वारा स्थापित "पत्र-व्यवहारगोष्ठी" के वे सक्रिय सदस्य थे ।[१]

आचार्य शिव जी के अनेक महत्वपूर्ण पत्र समकालीन साहित्यकारों से सम्बन्धित पत्र-संग्रहों में संकलित हैं । "उग्र" जी द्वारा सम्पादित "फाइल और प्रोफाइल" में उनके ४३ पत्र, "प्रसाद के नाम पत्र" शीर्षक संग्रह में २० पत्र और "निराला की साहित्य-साधना-३" में उनके १२ पत्र संकलित हैं । इसके अतिरिक्त पं० बनारसीदास चतुर्वेदी के नाम लिखे पत्र "नई धारा" के "शिवपूजन-स्मृति-अंक" में "वे पत्र : वे दिन" शीर्षक से प्रकाशित हुए हैं । "साहित्य" (त्रैमासिक) के "शिवपूजनस्मृति-अंक" में भी उनके कई मूल्यवान् पत्र प्राप्त होते हैं ।

"फाइल और प्रोफाइल" में संकलित पत्र शिवजी की विनम्रता, सदाशयता, भावुकता आदि चारित्रिक विशेषताएं प्रकट करते हैं और "उग्र" जी के साथ उनके स्नेहिल सम्बन्ध की सूचना दे देते हैं । जैसे, १३-५-१९२४ के पत्र में वे लिखते हैं- " - - - मेरे जैसे दरिद्र, पतित , अधमाधम और हृदयहीन व्यक्ति पर भी तुम्हारा इतना स्वाभाविक स्नेह है । मुझ जैसे मनुष्यत्वहीन और सिद्धांत हीन व्यक्ति के साथ संसार में किसी की सहानुभूति न होती तो मैं सचमुच जीने का साहस नहीं करता । तुम्हारे जैसे उदाराशय सज्जन अपनी सहानुभूति-सुधा सींच-सींचकर मुझे जिला रहे हैं ।"[२] "प्रसाद" के नाम प्रेषित शिवजी के पत्रों में "प्रसाद" जी के प्रति उनके आदरभाव तथा "निराला" के नाम लिखे पत्रों में "निराला" जी के आर्थिक संकट में सहायभूत होने की सतत प्रयत्नशीलता के हमें दर्शन होते हैं । पं० बनारसीदास चतुर्वेदी को लिखे गये पत्रों में उनका सरल, सौम्य ,

---

१ देखिए: पं० बनारसीदास चतुर्वेदी के नाम शिवजी का पत्र, "नईधारा", वर्ष-१४, "शिवपूजन-स्मृति-अंक," पृ० ४७४ ।

२ "फाइल और प्रोफाइल" (१९७०), पृ० ३५७ ।

समन्वयशील एवं सात्त्विक व्यक्तित्व स्पष्टरूपेण झलकता है । उदाहरण के लिए १६-१०-१९५४ के पत्र का निम्नलिखित अंश देखिए-

"- - - मैं आपकी छत्रच्छाया में शीतलता और शांति का अनुभव करता हूं । दलबन्दी से डरता हूं । आपके सुझाए मार्ग पर यथाशक्य अग्रसर होते हुए अपने प्रान्त की छोटी सीमा में साहित्यिक कार्य कर रहा हूं । आपका जो कुछ भी आदेश आता रहेगा उसका पालन करता रहूंगा ।"[1]

इससे स्पष्ट है कि शिवजी एक सफल पत्र-लेखक थे । डा० लक्ष्मी-नारायण दुबे ने बहुत उपयुक्त कहा है कि "उनके सहस्रों पत्र यत्र-तत्र बिखरे पड़े हैं जिनका संचयन और व्यवस्थित प्रकाशन, न केवल शिवजी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व के अनेक सूत्रों को खोलेगा, अपितु उनसे हिन्दी के वर्तमानयुग से सम्बद्ध बीसियों घटनाओं, सूचनाओं और प्रकरणों पर भी सम्यक् प्रकाश पड़ेगा ।"[2]

बालकृष्ण शर्मा "नवीन" :

पं० बालकृष्ण शर्मा "नवीन" नवयुग के एक क्रांतिकारी कवि थे । "उनका व्यक्तित्व विरोधाभासों का इन्द्रधनुष था । वे महान् और लघु साथ-साथ थे । वे अक्कड़ और विनयशील साथ-साथ थे । वे आसक्त और अनासक्त साथ-साथ थे । वे उपनिषद् के "तेन त्यक्तेन भुंजीथा:" के मूर्तिमन्त प्रमाण थे ।"[3] "नवीन" जी के पत्रों में हमें उनके इस विरोधाभासी व्यक्तित्व की स्पष्ट झलक मिलती है ।

हिन्दी के उन्मुक्त पत्र-लेखकों में "नवीन" जी का नाम विशेषरूप से उल्लेखनीय है । पं० प्रतापनारायण मिश्र के पत्रों में भी हमें उनके फक्कड़पन की झांकी मिलती है, किन्तु उनके पत्र अधिक संख्या में प्राप्त नहीं होते । "नर्मदा" के नवीन-अंक में प्रकाशित पत्र "नवीन" जी के मस्त और मनमौजी व्यक्तित्व के परिचायक हैं । ये सभी पत्र पं० बनारसीदास

---

१ "नईधारा," शिवपूजन-स्मृति-अंक, पृ० ४५६ ।

२ "आचार्य शिवजी: पत्र-लेखक के रूप में" (लेख), "साहित्य" (त्रै०), शिवपूजन-स्मृति-अंक, पृ० २०५ ।

३ "~~नर्मदा~~", "वीणा", नवीन-स्मृति अंक, सितम्बर १९६०, सम्पादकीय ।

चतुर्वेदी के नाम लिखे गये हैं । इन पत्रों से इन दोनों साहित्यकारों के अंतरंग सम्बन्ध पर प्रकाश पड़ता है । २०-१०-१९४९ के पत्र का प्रारम्भिक अंश द्रष्टव्य है -

" प्रियवर चौबेजी ,

नमस्कार ।

लोग जो यह समझ रहे हैं कि आपने कोई अभिनन्दन कम्पनी लिमिटेड या अनलिमिटेड खोली है, तो क्या भूल करते हैं ? आपके लच्छन ही हैं ऐसे, जो उन्हें इस प्रकार सोचने पर बाध्य करते हैं । मैं कहता हूं आप एक "अभिनन्दन-श्राद्ध-तर्पण-मुण्डन कम्पनी अनलिमिटेड" खोल लीजिए । - - - - "[१]

अपने नाम आये "नवीन" जी के विलक्षण पत्रों के सम्बन्ध में पं० बनारसीदास चतुर्वेदी ने अपने १-९-१९६३ के पत्र में श्री नरेश चतुर्वेदी को लिखा है -

"नवीन जी के पत्रों को पढ़कर आप प्रसन्न हो जायेंगे । सन् २००१ ई० में जब कोई छात्र जिज्ञासा से पूछ बैठेगा- यह बनारसीदास कौन था ? तो दूसरा जवाब देगा वही जिसे नवीन जी ने मजेदार पत्र लिखे थे ।[१]

"नर्मदा" के नवीन-अंक के अतिरिक्त "वीणा" के "नवीन-स्मृति-अंक" में भी पं० सूर्यनारायण व्यास, रामनारायण उपाध्याय आदि साहित्यकों को लिखे "नवीन" जी के कुछ पत्र प्रकाशित हुए हैं । श्री दामोदर झलानी, रामानुजलाल श्री वास्तव आदि के नाम प्रेषित "नवीन" के कुछ अनूठे पत्र "माध्यम" (दिसम्बर १९६५) में भी देखे जा सकते हैं । इन सभी पत्रों में मस्ती और ममता का जैसा आलम दिखाई पड़ता है, वैसा अन्यत्र दुर्लभ है । अत: कहा जा सकता है कि "नवीन" जी के ये पत्र, हिन्दी पत्र-साहित्य की बहुमूल्य निधि हैं ।

जैनेन्द्रकुमार :

साहित्यकारों के व्यक्तित्व और जीवन-दर्शन से सम्बन्धित पुस्तकों में उनके वैयक्तिक पत्रों को प्रकाशित करने की परम्परा सम्भवत: "जैनेन्द्र के विचार" से स्थापित हुई है । यह पुस्तक डा० प्रभार माचवे के सम्पादकत्व

---

१ " नर्मदा," नवीन-अंक, १९६३, पृ० २८ । २- "प्रेरक साधक" (१९७०) पृ० ५००।
~~१- "जैनेन्द्र के विचार" (द्वि०सं० १९७७), पृ० १८१~~ ।

में सर्वप्रथम सन् १९३७ में प्रकाशित हुई थी । इसमें माचवे जी ने अपने नाम आये जैनेन्द्रकुमार के पत्रों के महत्वपूर्ण अंश प्रकाशित किये हैं । इन पत्रांशों से जैनेन्द्रकुमार की "परख" में एक "वातायन" खुल सकता है । इन पत्रों में सवाल-जवाब भी है, कुछ चर्चाओं का जिक्र है और कुछ विवाद भी । जीवन-दर्शी जैनेन्द्र और उनकी पत्र-लेखन शैली का सुन्दर परिचय हमें इन पत्रों में प्राप्त होता है । उदाहरण के लिए यहां हम १-८-१९३५ के पत्र का एक अंश प्रस्तुत करते हैं -

" भाई माचवेजी ,

पत्र मिला । - - - -

मेरे बारे में यह बात आप जान लें कि किताबों में मेरी पहुंच कम है । इसलिए मेरा जवाब थोड़ा और सादा ही हो सकता है ।

जीवन से कला को तोड़कर मैं नहीं देख पाता । सत्याभिमुख जीवन की अभिव्यक्ति कला है । शब्दांकित अभिव्यक्ति साहित्य है ।--"[1]

जैनेन्द्रकुमार और प्रेमचन्दजी का आत्मीयता से भरा पत्र-व्यवहार, मदनगोपाल और अमृतराय द्वारा सम्पादित "चिट्ठी-पत्री भाग-२" में प्रकाशित है । इसे पढ़ने से ज्ञात होता है कि जैनेन्द्रकुमार प्रेमचन्दजी को अपना मार्गदर्शक मानते थे । १६ अप्रैल १९३१ के पत्र में उन्होंने लिखा है कि -"मैं यहां आपकी सलाह और मदद से कुछ अपनी जिन्दगी की समस्याओं को हल करने की सोच रहा था ।"[2] डा० विजय कुलश्रेष्ठ की "जैनेन्द्र के उपन्यासों की विवेचना" शीर्षक पुस्तक में भी जैनेन्द्रकुमार के कुछ पत्र प्रकाशित हुए हैं । दिनांक ५-३-१९७० को लिखे एक पत्र में अपने उपन्यासों के विकास-क्रम की चर्चा करते हुए उन्होंने अपने लेखन के उद्देश्य को भी प्रकट किया है । उन्होंने लिखा है-" मैं "कमाई" के विरुद्ध हो गया था और मेरे लिखने का सम्बन्ध "कमाई" से नहीं है ।"[3] इस प्रकार जैनेन्द्रकुमार के के पत्र, उनके व्यक्तित्व और जीवन-दर्शन पर पर्याप्त प्रकाश डालते हैं ।

---

१ "प्रेरक-सम्बल" पृ९९

१ "जैनेन्द्र के विचार" (द्वि० सं० १९७७), पृ० १८१ ।

२ "चिट्ठी-पत्री भाग-२" (१९६२), पृ० २२ ।

३ "जैनेन्द्र के उपन्यासों की विवेचना" (१९७६), लेखकीय, पृ० ५ ।

उपर्युक्त पत्र-लेखकों के अतिरिक्त वृन्दावनलाल वर्मा, राहुल सांकृत्यायन, नन्ददुलारे वाजपेयी, रामधारीसिंह "दिनकर," गजानन माधव "मुक्ति बोध" आदि लेखकों के पत्र भी विविध ग्रंथों तथा पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं । इन पत्रों में भी हिन्दी साहित्य की अनेक घटनाओं, विवादों और प्रकरणों के महत्वपूर्ण सन्दर्भ उपलब्ध होते हैं । पत्र-लेखन कला की दृष्टि से भी ये पत्र अत्यन्त उत्कृष्ट हैं, किन्तु विस्तार-भय से यहां इन लेखकों के पत्र-साहित्य की चर्चा नहीं की जा सकती । आगे यथास्थान इनके पत्रों की विशेषताओं का उल्लेख किया जायेगा ।

साहित्येतर क्षेत्रों के अन्य पत्र-लेखक :

जिस प्रकार साहित्येतर क्षेत्र के प्रमुख पत्र-लेखकों— महात्मा गांधी, सेठ जमनालाल बजाज और आचार्य विनोबा भावे ने अपने उत्प्रेरक एवं विचारोत्तेजक पत्रों से हिन्दी पत्र-साहित्य को समृद्ध किया है, उसी प्रकार इन्हीं महापुरुषों के समकालीन कुछ प्रसिद्ध राजनयिकों, दार्शनिकों एवं समाज-सुधारकों के पत्रों से भी हिन्दी पत्र-साहित्य के विकास में यथेष्ट सहायता मिली है । अत: यहां विविध क्षेत्रों के अन्य उल्लेखनीय पत्र-लेखकों की संक्षिप्त चर्चा की जाती है ।

राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन :

हिन्दी के अनन्य आराधक और "हिन्दी साहित्य सम्मेलन" के प्राणाधार राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन हमारे स्वतंत्रता-संग्राम के निर्भय सेनानी थे । आचार्य किशोरीदास वाजपेयी ने उनको "हिन्दी-गंगा के भगीरथ" कहा है ।[१] राजर्षि टंडन के पत्रों का कोई स्वतंत्र संग्रह तो देखने नहीं आया, परन्तु विविध पत्र-संग्रहों तथा ग्रंथों में उनके अनेक महत्वपूर्ण पत्र प्रकाशित हुए हैं । श्री वियोगी हरि द्वारा सम्पादित "बड़ों के प्रेरणा-दायक कुछ पत्र" में टंडन जी के भी कुछ प्रेरक पत्र संकलित हैं । इन पत्रों में उनके चरित्र की दृढ़ता, निर्लिप्तता आदि अनेक विशेषताएं देखने को मिलती हैं । जैसे, उड़ीसा के राज्यपाल-पद के सम्बन्ध में लिखा गया उनका १६-जनवरी, १९५४ का यह पत्र देखिए -

---

१ देखिए: "सम्मेलन पत्रिका", गांधी-टंडन-स्मृति-अंक, शक-१८९१, पृ०२०७ ।

प्रिय हरिजी ,

नमस्कार ।

राज्यपाल-पद के लिए तुमसे दिल्ली में बात हुई थी, उस पर विचार करता रहा । स्वीकृति का पत्र भी लिखने बैठा, परन्तु हृदय ने बलवा कर दिया, और अंत में अपनी कृतज्ञता प्रकट करते हुए उस पद की स्वीकृति से मैंने क्षमा मांगी ।"[१]

सिद्धांत के लिए बड़े से बड़ा त्याग करना पड़े तो उसके लिए टंडन जी हमेशा तत्पर रहते थे । महात्मा गांधी को हिन्दी साहित्य सम्मेलन में वे ही लाये थे, परन्तु जब महात्मा जी हिन्दुस्तानी को राष्ट्रभाषा बनाने का आग्रह करने लगे तो टंडन जी उनसे सहमत नहीं हुए । इस सम्बन्ध में इन दोनों महापुरुषों के बीच जो ऐतिहासिक पत्र-व्यवहार हुआ,[२] वह "बापू-बाबू पत्र-व्यवहार" के नाम से प्रसिद्ध है । इस प्रकार टंडन जी के पत्रों का ऐतिहासिक महत्व है ।

डा० राजेन्द्र प्रसाद :

देशरत्न डा० राजेन्द्रप्रसाद महात्मा गांधी के प्रमुख सहयोगी और स्वतंत्र भारत के प्रथम राष्ट्रपति थे । सेवा, सादगी, शालीनता, सहिष्णुता आदि सद्गुणों के कारण उन्होंने भारत की जनता का हृदय जीत लिया था । उनके वास्तविक व्यक्तित्व का परिचय हमें उनकी "स्वतंत्र-भारत की झलक" शीर्षक पुस्तक में प्राप्त होता है । इस पुस्तक में उनके कुछ चुने हुए पत्र प्रकाशित हैं जो उन्होंने समय-समय पर अपनी पुत्री-तुल्य डा० ज्ञानवती दरबार के नाम लिखे थे । इन पत्रों में स्वतंत्र भारत की अनेक राजनैतिक घटनाओं की झलक प्रस्तुत की गयी है । इनमें संविधान का निर्माण, संविधान और संसद, प्रथम राष्ट्रपति के गणतंत्र-दिवस-समारोह आदि घटनाओं का केवल विवरण ही नहीं है, इन घटनाओं के सन्दर्भ में लेखक ने अपनी प्रतिक्रिया भी दी है । उदाहरणत: गणतंत्र-दिवस-समारोह में प्रस्तुत की गयी झांकियों के सम्बन्ध में उन्होंने लिखा है -

---

१ देखिए: "सम्मेलन मंत्रिका", मंत्री-टंडन-स्मृति-अंक, सं०-१९९९, पृ० २०७ ।
१ "बड़ों के प्रेरणादायक कुछ पत्र" (१९६०), पृ० ८२ ।
२ देखिए: श्रीगोपालप्रसाद व्यास द्वारा सम्पादित "गांधी हिन्दी दर्शन" पृ० २२६-२३१ पर प्रकाशित- "हिन्दुस्तानी के प्रश्न पर ऐतिहासिक गांधी-टंडन पत्र-व्यवहार" ।

"प्रिय ज्ञान ,

गणतंत्र-दिवस-समारोह में भारतीय झांकियों के दृश्य और लोक-नृत्य ने भारतीय जीवन की विभिन्नता का पूरीतरह प्रतिनिधित्व किया है । लेकिन उसमें कुछ ऐसी असंगतियां भी देखने को मिली जिनकी ओर आयोजकों का शायद ध्यान ही न गया हो ।"[1]

डा० राजेन्द्रप्रसाद केवल एक राजनैतिक नेता ही नहीं थे, एक उत्तम लेखक भी थे । वे पं० पद्मसिंह शर्मा के साहित्यिक शिष्य थे और शर्मा जी को सदैव "परम पूजनीय श्रद्धेयवर" लिखा करते थे । पं० श्रीनारायण चतुर्वेदी ने अपनी "मनोरंजक संस्मरण" शीर्षक पुस्तक में पं० शर्माजी के नाम राजेन्द्रबाबू का सन् १९१० में लिखा पत्र उद्धृत किया है जिसमें "भारतोदय" में प्रकाशित उनके "समाज-संशोधन" शीर्षक लेख के प्रकाशन के लिए हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त की गयी है ।[2] पं० बनारसीदास चतुर्वेदी ने अपने "श्रद्धेय बाबू राजेन्द्रप्रसाद "शीर्षक रेखाचित्र में भी राजेन्द्रबाबू के दो-तीन पत्र उद्धृत किये हैं जिनमें २-८-१९४५ के पत्र में उन्होंने लिखा है कि -"हिन्दी को किसी भी भाषा से शब्दों को लेने में संकोच नहीं करना चाहिए ।"[3] श्री कपिलदेव सिंह "सुहृद" ने अपनी "व्यक्ति और व्यक्तित्व" शीर्षक पुस्तक में भी स्वाधीनता-संग्राम की गतिविधियों से सम्बन्धित राजेन्द्रबाबू के कुछ महत्वपूर्ण पत्र उद्धृत किये हैं ।[4] इस प्रकार डा० राजेन्द्रप्रसाद का पत्र-साहित्य राजनैतिक एवं साहित्य दोनों ही दृष्टियों से महत्व रखता है ।

इसके अतिरिक्त स्वाधीनता संग्राम के समय चूरू(राजस्थान) में चेतना की चिनगारी जगानेवाली स्वामी गोपालदासजी के अनेक प्रेरणादायक पत्र गोविन्द अग्रवालकृत "पत्रों के प्रकाश में स्वामी गोपालदासजीका

---

१ "स्वतंत्र भारत की झलक" (१९७३), पृ० ४८ ।

२ "मनोरंजक संस्मरण" (१९७७), पृ० २०७ ।

३ "रेखाचित्र" (१९५२), पृ० ९४ ।

४ "व्यक्ति और व्यक्तित्व" (१९६७), पृ० ५-९ ।

व्यक्तित्व एवं कृतित्व" शीर्षक पुस्तक में प्रकाशित हैं, स्वामी सत्यभक्त के चिन्तशील पत्रों के अंश "अनमोल पत्र" शीर्षक संग्रह में संकलित हैं, महामहोपाध्याय पं० कविराज गोपीनाथ का आध्यात्मिक पत्र-व्यवहार डा० भगवतीप्रसाद सिंह लिखित "मनीषी की लोकयात्रा" शीर्षक जीवनी के "पत्रालोक" प्रकरण में संकलित है और सन् १९४२ में अहमदनगर जेल से श्री गोविन्दवल्लभ पन्त द्वारा अपने बच्चों के नाम लिखे गये ज्ञानवर्धक पत्र श्री शम्भूप्रसाद शाह कृत "गोविन्दवल्लभ पन्त : एक जीवनी" के "बापू के पत्र राजा के नाम" शीर्षक प्रकरण में प्रकाशित हैं । इस प्रकार हिन्दी पत्र-साहित्य के विकास में साहित्येतर क्षेत्रों के मनीषियों का योग भी कम महत्वपूर्ण नहीं है ।

निष्कर्ष :

पत्र-साहित्य की पृष्ठभूमि और हिन्दी में उसके विकास के अनुशीलन के पश्चात् हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि पत्र-लेखन सबसे प्राचीन, सुकुमार एवं मानवीय विधा है । मानव-सभ्यता के विकास के साथ पत्र के अंतर्बाह्य स्वरूप में भी परिवर्तन होता रहा है । साहित्य से उसका सम्बन्ध मुख्यत: आधुनिक युग में ही हुआ है । यद्यपि प्राचीन संस्कृत साहित्य में किसी प्रसिद्ध व्यक्ति के पत्रों का स्वतंत्र संग्रह उपलब्ध नहीं होता, किन्तु ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर कहा जा सकता है कि ई० पू० ६०० के समीप भारत में पत्र-लेखन कला का विकास हो चुका था । भारतीय नवजागरण (१८५७ ई०) के आरम्भ तक हिन्दी में संस्कृत की परम्परागत शैली में ही पत्र लिखे जाते थे । नवजागरण-काल में हिन्दी साहित्य की अन्य रूपविधाओं के साथ पत्र-विधा पर भी पाश्चात्य साहित्य का प्रभाव पड़ा और महत्वपूर्ण व्यक्तियों के पत्र प्रकाश में आने लगे ।

हिन्दी पत्र-लेखन के क्षेत्र में नवीन प्रयोगों का आरम्भ भारतेन्दु-युग में ही हो गया था । यद्यपि इस युग में किसी महत्वपूर्ण व्यक्ति के पत्रों का कोई स्वतंत्र संग्रह प्रकाशित नहीं हुआ, किन्तु इसमें साहित्यिक महत्व के अनेक पत्र लिखे गये हैं । हिन्दी में पत्र-साहित्य की विधिवत् परम्परा का सूत्रपात द्विवेदी-युग में, आर्य-समाजी लेखकों ने किया ।

स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद हिन्दी पत्र-साहित्य के विकास में अधिक गतिशीलता आई और विभिन्न क्षेत्रों के मनीषियों के स्वतंत्र-पत्र संग्रहों के अतिरिक्त विविध ग्रंथों तथा पत्र-पत्रिकाओं में भी प्रचुर पत्र-साहित्य प्रकाश में आया । अत: यह कहना ठीक नहीं है कि हिन्दी में अब भी पत्र-साहित्य की स्थिति क्षीण-हीन है । सच तो यह है कि हिन्दी में पत्र-साहित्य का स्तरीय विकास हुआ है ।

हिन्दी में पत्र-साहित्य का महत्व प्रतिष्ठित कर उसे परिश्रमपूर्वक प्रकाश में लाने का सर्वाधिक प्रशंसनीय कार्य पं० बनारसीदास चतुर्वेदी ने किया है । उन्होंने साहित्य और साहित्येतर क्षेत्रों की अनेक विभूतियों के पत्रों को संगृहीत कर पत्र-पत्रिकाओं तथा पुस्तकों में उसके यथासमय प्रकाशन का स्वयं भी प्रयत्न किया और अन्य व्यक्तियों को भी प्रेरित किया । अत: हिन्दी पत्र-साहित्य के विकासेतिहास में उनका नाम सदैव स्मरणीय रहेगा ।

जैसा कि हम देख चुके हैं, पत्र के रूढ़ और मूल रूप के अतिरिक्त हिन्दी में ऐसा भी साहित्य प्रकाशित हुआ है जो पत्र के बाहरी ढांचे और नाम में वस्तुत: अन्य विधाओं का साहित्य है । दूसरे शब्दों में पत्र-शैली में लिखे गये निबन्धों, यात्रावृत्तों, संस्मरणों आदि को विशुद्ध पत्र-साहित्य नहीं कहा जा सकता । अत: हमने प्रमुख और अन्य पत्र-लेखकों के रूप में उन्हीं मनीषियों की चर्चा की है जिन्होंने समय-समय पर पत्र लिखकर अनेक व्यक्तियों को प्रेरित और प्रोत्साहित किया है और सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक एवं साहित्यिक गतिविधियों पर महत्वपूर्ण प्रकाश डाला है । प्रमुख पत्र-लेखकों का पत्र-साहित्य विस्तृत होने के कारण प्रस्तुत अध्याय में इसका संक्षिप्त परिचय ही दिया गया है । इसकी विस्तृत चर्चा अब हम अगले अध्याय में करेंगे ।